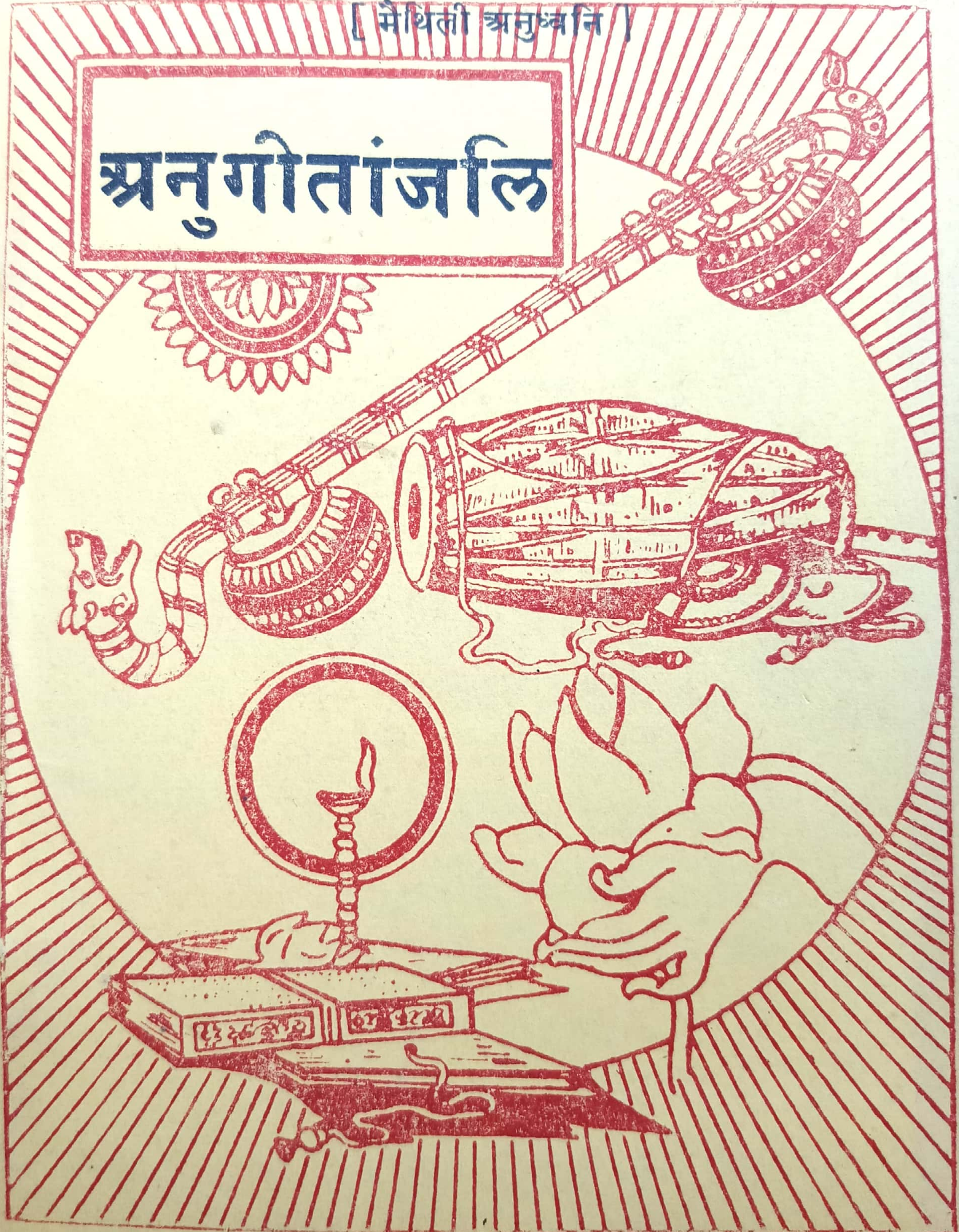
कवीन्द्र रवीन्द्र कृत

गीतांजलि



श्री सुरेन्द्र झा 'सुमन'

गीताञ्जलि

(बंगला)

कवीन्द्र रवीन्द्र

●

अनुगीतांजलि

(मैथिली)

卐

श्री सुरेन्द्र झा 'सुमन'



प्रथम संस्करण
(१९६९)

मूल्य २—००
(दुइ टाका)

प्रकाशक,
श्रीभूपेन्द्र झा
मैथिली-मन्दिर, दरभंगा
मुद्रक
मिथिला प्रेस
राजकुमारगंज, दरभंगा

'तुमि सन्ध्यार मेघ शान्त सुदूर
आमार साधेर साधना।
आमि आपनि माधुरी मिशाये
तोमार करे छि रचना॥'

—रवीन्द्र



उदित रवि क प्रतिभा प्रभा साहित्य नभ झलकैछ।
जनिक किरन कन परसि ससि ग्रह गन भासित ह्वैछ॥

— 'कविनवतिका'

तव कथामृतं तप्तजीवनं
कविभिरीडितं कल्मषापहम् ।
श्रवणमङ्गलं श्रीमदाततं
भुवि गृणन्ति ते भूरिदा जनाः ॥

—श्रीमद्भागवत

तव च का किल न स्तुतिरम्बिके !
सकलशब्दमयी किल ते तनुः ।
निखिलमूर्तिषु मे भवदन्वयो
मनसिजासु बहिःप्रसरासु च ॥
इति विचिन्त्य शिवे ! शमिताशिवे !
जगति जातमयत्नवशादिदम् ।
स्तुतिजपार्चनचिन्तनवर्जिता
न खलु काचन कालकलास्ति मे ॥

—आचार्य अभिनव गुप्त

स्वर-संधानिका

शरीरक उपलब्धि थिक बल-शक्ति, मनक थिक ओज-तेज एवं सत्य-ज्ञान थिक आत्माक उपलब्धि। तदुत्तर एक औरो तुरीया उपलब्धि बाँचल रहि जाइछ, जकर सम्बन्ध अछि हृदय सँ—भावात्मक, रागात्मक, संवेदनात्मक जे कोनो नाम दियौक—ओहि आवेगात्मक अभिव्यक्ति सँ। प्रेम-भक्ति, श्रद्धा-वात्सल्य, करुणा-द्रुति, राग-रति आदि भिन्न-भिन्न उपाधि-विवर्त ओही सँ उठैछ, ओही मे विलीन होइछ।

जेना अनहद नाद निकट-दूर, मन्द्र-मन्द, कटु-मधु, ढक्का-भेरी—वीणा वेणुक विविध स्वर-तरङ्ग मे निनादित होइछ तहिना हृत्तन्त्रीक तार-तार नाना स्वर-धुनि मे, विविध रंग रूप मे, अनेक लय-छन्द मे रणित ध्वनित होइत रहैछ।

गङ्गा-यमुनाक एकीभाव जेना प्रयाग कें तीर्थराज बनबैछ, अन्तर्हित सरस्वतीक सङ्गतिक आधार बनि जेना ओ त्रिवेणीक अभिधा कें सार्थक करैछ, तहिना साहित्य एवं सङ्गीतक गंगा-यमुनी सङ्गति अन्तर्वाहिनी चिन्तन धाराक समन्वय सँ गीतक गरिमा प्राप्त करैछ।

'वेदानां सामवेदोऽस्मि'—ऋक्-यजुक अपमान मे नहि, सामगानक सम्मान मे कहल गेल अछि; 'काव्यं गीतेन हन्यते'—काव्यतत्त्व कें दुरदुरयबा लेल नहि; स्वर-संगति कें अपनयबा

लेल कहल गेल अछि। वस्तुतः साहित्य–सङ्गीत दूहू गीत-सारस्वतीक स्तनद्वयी थिक जे सर्वदा सुश्लिष्ट रूपेँ सभ्यता सृष्टिक पोषिका बनैछ।

तेँ त कर्णधारी सभ गीतेलय पर पद-संचलन करैत छथि। पौरुषक रणधुरा (मार्चिंग सौंग) सँ लय जाँत पिसनिहारिक श्रमहारिणी लगनी धरि, सोहर सँ लय समुदाउनिक योग-वियोग धरि सबतरि गीतेक पुजारी। भक्तोलोकनि नामधुनिमे लय, लीलाकथामे पद-छन्द, विनय-आत्मनिवेदनमे स्वर-मूर्छना सब रूपेँ गीतेक गोहारि। एहिना ज्ञानरथीक पथमे चेतावनी, निर्गुन, साधना-संकेत बहुत किछु गीत-स्वरक लीख-रेखा धड़ कड़। तेँ त व्यास-बाल्मीकि, कालिदास-भवभूति, शङ्कराचार्य-यामुनाचार्य, बल्लभ-गौराङ्ग, जयदेव–अभिनवजयदेव, सूर-तुलसी, कबीर-मीरा; भूषण-विहारी, गोविन्द-चन्दा, नजरुल-बिस्मिल, बंकिम-रवीन्द्र सभक सभ गीत सँ प्रीति रखैत।

....

आधुनिक युगक सर्वश्रेष्ठ गीतकार, नूतन-पुरातन दूहू भावधाराक प्रतिभाशाली व्याख्याकार कवीन्द्र रवीन्द्रक कण्ठ-गंगोत्रीसँ जे बिन्दु-बिन्दु गीतराशि अहरह प्रवाहित भेल ओ भारतवर्ष उत्कर्षक कारण बनैत विश्वसाहित्यकेँ सरस कय गेल!

रवीन्द्रनाथ ठाकुर वर्तमान युगक महान् सारस्वत पुरुष भेलाह—प्रसिद्ध कवि कथाकार, नैबन्धिक, द्रष्टा, युगचेता लोकनायक एवं महान् आध्यात्मिक साधक छलाह। हुनक वाणी

वसुधा जकाँ गंधवती, सरिता जकाँ रसप्रवाहवती, अग्निवत् ज्वलित, वायुवत् स्पर्शी एवं गगन जकाँ व्यापक। तदधिक हुनक उक्ति-सूक्ति मन्त्र जकाँ मान्य, सङ्गीतवत् श्रवणीय एवं उषा-सन्ध्या जकाँ रमणीय-कमनीय। अतएव उचिते छल जे स्वाधीन भारत अपन राष्ट्रकवि रवीन्द्रनाथक सम्मानमे जन्म-शताब्दी संवत्सर मनाबय; ओ प्रत्येक भारतीय भाषा कविगुरुक सम्मानमे अपन श्रद्धासुमन चढ़ाबय। एही प्रसङ्ग लऽ कऽ ओहि समय म.म. डा० श्रीउमेश मिश्र जी (तत्कालीन श्रीकामेश्वर सिंह दरभंगा विश्वविद्यालयक उपकुलपति) क ओतय चर्चा चलने प्रसङ्ग आयल जे श्रद्धा-भक्ति अनेक प्रकारें भऽ सकैछ। हुनक कृति-कीर्तिक श्रवण, हुनक विचारधाराक चिन्तन स्मरण, हुनक विविध साहित्य विधाक मैथिली मे अवतरण अथवा हुनक पद-पद्धतिक अनुगमन पूर्वक कण्ठ मे कण्ठ मिलाय हुनक स्वर-स्रोतक अनुसरण। अन्तमे अन्तिमे प्रकारक विचार रुचल, ओ तदनुकूल मुख्यतः गीताञ्जलिक संग गीतिमाल्य, चयनिका, नैवेद्य, शिशु, खेया आदि गीत-रचना सँ सय गोट गीतक चयन कय मातृभाषाक माध्यमेँ ओकर प्रतिबिम्बनक प्रयास कयल। परंच ओ कहाँ धरि उपयुक्त भेल, से अपनहु पता नहि। अनुवाद तँ सत्ते एकरा कहि नहि सकै छी, कारण 'छायेवानुगच्छत्'क एतय निर्वाह नहि। कतहु रूप-छाया तँ कतहु भावे, कतहु मर्म मात्रे। एतय विचार हुनक, तँ स्वर संचार अपन; भाव निबन्ध हुनक, तँ छन्दबन्ध अपन—जेना फुलबाड़ीक दल फूल चुनि-बिछि

कोनो पुजारी देवताक लेल अपन रुचिमत माल्य गँथबाक प्रयासी हो। किछु पद द्विरुक्तो भेल, कारण लिखित पद कतहु भोतिया गेने पुनः नव लिखल गेल आ' से पुनि उपलब्ध भेने संग्रह मे राखिओ देल गेल, किछु त श्रमकेँ अव्यर्थ रखबाक प्रेरणेँ आ' किछु दूहू मे की कोना अन्तर आबि गेलैक तकर विनोदेँ।

'अनुगीताञ्जलि' केँ प्रस्तुत भेना चारि वर्ष बीति गेल। खेद जे साधनाभावेँ एकर प्रकाशन ने स्मृति-संवत्सर मे आ' ने प्रेरणाप्रदाता माननीय मिश्रजीक जीवन-काल मे सम्भव भेल। अथापि सन्तोष एतबे जे कोनो रूपेँ, देर-अबेर कवीन्द्रक श्रद्धाराधन, स्नेह-विश्वासपूर्वक आदेशकर्ता स्वर्गत मिश्रजीक आदेश-पालन, मातृभाषाक यत्किञ्चित् सेवासाधन एवं तद्-द्वारा स्वान्तः सुखाय एहि रचना केँ आइओ सहृदय पाठकक समक्ष उपस्थित कय सकलहुँ।

'जानि सकै छथि वैह, अबुझ पुनि की हम बुझबे।
प्राण क जे संवाद भाव हम गानहि भरबे॥'



जानकी नवमी,
दरभङ्गा (१६६६ ई०) } विनत—अनुगायक, 'सुमन'

अनुगीतांजलि

१

'आमार माथा नत करे दाओ हे
तोमार चरण धूलार तले'

अपन चरणक धूलि तल मे माथ हमर लोढ़ाय।
मम-अहम् कें दी दयामय ! नोर धार बहाय ।।
कयल अपना कें तिरस्कृत पुरस्कृत करबाय,
घेरि–बेढ़ि स्वयं निजहि कें छने छन हति हाय !
मम-अहम् कें दी दयामय ! नोर धार बहाय ।।
अपन कृति मे हम न अपन प्रचार करबे जाय,
प्रभु ! अहँक इच्छा पुरय, माध्यम हमर लघु काय ।
मम-अहम् कें दी दयामय ! नोर धार बहाय ।।
देव अपन प्रशान्ति चरमा, प्राण मे भरि कान्ति परमा,
राखि हमरा निज इरोत इजोत भरि उर कमल सुषमा।
प्रभु प्रभामय ! आबि राजित रही जीवन काय।
मम अहम् कें दी दयामय ! नोर धार बहाय ।।

२

'आमि बहु वासनाय प्राण पणे चाइ'

कत रञ्जित वासना, छलहुँ जहि पर हम मरइत
कय वञ्चित हमरा बचाय लेलहुँ हरि ! हरइत,
सञ्चित ई करुणा कठोर अछि जीवन भरइत ।
बिन मङनहुँ जे दान-स्रोत देलहुँ अहँ लहरा,
गगनक ई आलोक प्रान जीवन मे झहरा,
दिन-दिन महादान केर भाजन बनबी हमरा—
अति इच्छाक विकट सङ्कट सँ रक्षा करइत,
सञ्चित ई करुणा कठोर अछि जीवन भरइत ।
कखनहुँ भ्रमित होइ, कखनहुँ पथ चलि पड़इत छी,
अहिंक लक्ष्य धय भ्रमण हेतु कत पद थपइत छी,
ससरि किन्तु हे निठुर ! अहाँ झट हटि पड़इत छी ।
विदित होय पुनि करुणा करुणाकरक असंशय,
अपनयबेक उपक्रम मे प्रभु ! ई बिछोह दय,
ठोकि–ठठा जीवन केँ बनबी मिलन योग्यतर—
अधकच इच्छा केर संकट सँ रक्षा करइत,
सञ्चित ई करुणा कठोर भरि जीवन भरइत ।

३

'कत आजानारे जानाइ ले तुमि'

अनचिन्हार कें चिन्हा देल कत घर मे देल बसाय ।
दूरहु कें अनलहुँ समीप आनहु कें भाय बनाय ।।
पुरना बास छोड़ि जायब की होयत, मन भिन्नाय ।
नित-नूतन बिच चिर-पुरातनों छी अहँ, ई न बुझाय ।।
जीवन मरन जखन जन निखिल भुवन बिच ली अपनाय ।
जनम-जनम केर संगी अंगी अपनहिँ देब चिन्हाय ।।
जानि अहाँ कें ली ततबे सँ जगत समग्र जनाय ।
ने भय ने किछु रोध, सोध सभ मे अहाँक छवि छाय ।।
मिलित रूप सभ जनक एक अहँ दृ[illegible]-नथ जाय जोगाय ।
दूरहु कें अनलहुँ समीप आनहुँ कें भाय बनाय ।।

४

'विपदे मोर रक्षा करो, ए नहे मोर प्रार्थना'

विपत्ति पड़य तँ रक्षा करबे, ई नहि हमर विनय ।
किन्तु न विपदा मे कदापि हम, नाथ ! करी किछु भय ।।
व्यथा - वेदना मे चाही नहि सान्त्वना क संचय ।
किन्तु दुःख दुर्गति केर दुर्ग क हम कय सकी विजय ।।
नहि सहाय जूटय तँ क्षति नहि अपन न शक्ति टुटय ।
जगती बिच विच्युति कतबहु वा वंचना क संचय ।
किन्तु न मन मे हो कदाच जे भेल अपन अपचय ।।
आबि त्रान करुनानिधान करु, ई न करी अनुनय ।
किन्तु इष्ट एतबे, दय पाबी पारक बल परिचय ।।
दी न सान्त्वना भार उतारि माथ लाघव अति कय ।
किन्तु वहन करबा केर क्षमता हमरा बनल रहय ।।
सुख-संपति अवसर अयनहुँ हम माथ झुकाय सदय ।
सहजहिँ चीन्हि जाइ जे मुख छवि अहँक सदय चमकय ।।
काल - रात्रि मे दुख विपदा क, समग्र धरा कँपबय ।
पावि वंचनो, हो न रंच किछु अहँक विषय संशय ।।

•

५

'अन्तर मम विकसित कर अन्तरतर हे'

अंतर मम विकसित करु अन्तरतर हे !
उज्ज्वल करु, निर्मल करु, सुन्दर करु हे !
जाग्रत करु, उद्यत करु, निर्भय करु हे !
मंगल करु, निरलस करु, संशय हरु हे !
बिकसित करु अंतर मम विकसित करु हे !

सकल संग युक्त करू मुक्त बंध हे !
कर्म मात्र सौम्य, भरू शांति छद हे !
चरण कमल मधुक मधुप रंजित करु हे !
स्पंदहीन छंदित करु, नन्दित करु हे !
अंतर मम विकसित करु अंतरतर हे !

६

'आमारे तुमि अशेष करेछ एमनि लीला तव'

देब ! अहाँ माटिक भाजन केँ कनक पात्र गढ़ि देल ।
मरणशील काया मे अमर अशेष तत्त्व भरि देल ॥
लगले करइत रिक्त-सिक्त अहँ रचइत छी कत खेल ।
मरण वरण करितहुँ पुनि मनुजनु जनमि नवीन झमेल ॥
गिरि-गह्वर मे, तटिनी-तट मे लय लघु वेणु घुमैत ।
बजबी शत शत बेरि फूकि नव श्वास तान कत लैत ॥
परस अमिय रस अहँक हमर हिय अतुल हरस रस बोरि ।
अतल असीम निमज्जित कय सज्जित वाणी मधु घोरि ॥
निश-बासर दानक प्रवाह बहइत हमरहु हित मुक्त ।
राशि राशि भरइत पुनि रिक्ते पात्र युगावधि युक्त ॥

७

'तुमि जखन गान गाहिते बल'····

प्रभु ! कयल अहाँ संकेत, गाउ किछु गाने ।
सुनितहिँ उछलल उर हमर भरल अभिमाने ।।
छलछला उठल सहसा नोरें दुहु लोचन ।
टकटकी लगाय निहारल छवि मनमोहन ।।
तिख-रुख कठोर-कटु जत छल जीवन-जडता ।
गलि गलि कोमल संगीत बनल मधु अमृता ।।
साधन आराधन सभ उड़ि चलल विहंगम ।
जत क्षितिज गीत-स्वर नीरधि व्योमक संगम ।।
छी हमर तान - लय सँ सरिपहुँ अहँ प्रमुदित ।
अछि गीति-रीति अति प्रीतिजनक ई सुविदित ।
हमहूँ केवल गीतक बल रखइत मन मे ।
बैसै छी जा कय अपन प्रभुक संमुख मे ।।
मन देनहुँ जे नहि छुबि सकलहुँ पद पावन ।
गानक दानहि सँ असुलभ रहले आब न ।।
स्वर अमिय सुरस वश विस्मृत-चेतन अगजग ।
कहि बन्धु सखा प्रभु कें बजबी अपनहि लग ।।

८

'तुमि केमन करे गान कर जे गुणी'....

कोना एहन तान-धुनी, गबइत छी गान गुनी ।
चकित चित्त रुद्ध कंठ, बंद नयन गान सुनी ।।

जकर स्वरक तीव्र किरण, दीपित अछि भुवन भवन,
जकर स्वरक गंध पवन, भरइछ नित शून्य गगन,
जगत क पाषान कठिन, गलित द्रवित सुरधुनी ।।

मन हो एही प्रकार, झंकृत हो स्वर उदार,
बंद किन्तु कंठ द्वार, मुक्त हमर उर सितार,
सुर क तार आइ बलित ललित कलित रागिनी ।।

रसना ई गान-विफल, हारि मानि प्रान विकल,
अकसक उर बेनु फुकल, व्यथा भरल कथा तरल,
कोन फंद मे फसाय, चौदिस सुरजाल बुनी ।।

९

'आमार सकल अङ्गे, तोमार परश'

अंग अंग मे अहँक परस पावन अह-निस निस्यूत ।
सुमिरि सुमिरि से प्राणेश्वर ! राखव तन कें परिपूत ।।
ज्ञानेश्वर ! मन मे राजित छी से बुझि-सुझि सदिकाल ।
चिन्तित चित्तक दूर करब सब विध मिथ्या भ्रमजाल ।।
हृदय अहिँक सिंहासन थिक, ई जानि प्रेमजल माजि ।
सकल अमंगल राग-द्वेष कय दूर धरब उर साजि ।।
जे किछु कर्म धर्म अछि, सभ मे प्रभुक प्रेरणा सार ।
जानि मर्म ई करब कर्ममात्रहि सँ अहँ क प्रचार ।।

१०

'तुमि एकटु केवल वसते दियो काछे'

एक पलक हेतु अपन निकट बसा लेब ।
संग लगा लेब अपन अंग बना लेब ।।
जे किछु सर्वस्व हमर तकरा उपहार ।
आइए सँ पूर्ण करब षोडशोपचार ।।
कर्म - सिंधु मे बहैत कूल ने विराम ।
दरस-परस विनु न होय मन कें बिसराम ।।
खिड़की सँ हुलुकि हुलुकि मधुक ऋतु तकैछ ।
भ्रमर हमर कुंज-पुंज मधु-मलय घुमैछ ।।
नीरव अवसरक एक परिसर हम पावि ।
आत्म समर्पणक गान गायब-चित भावि ।।

११

'छिन्न करे लओ हे मोरे आर विलम्ब नय'

ई फूल धूल मे जाय मिलत अविलंबे ।
ली तोड़ि मालि ! अहूँ, हमर हृदय अवलंबे ॥
माला मे गाँथ' क योग्य - कुसुम नहि जानी ।
कर - आघातहु केँ भाग्य अपन ध्रुव मानी ॥
करु छिन्न वृंत, नहि करु विलंब वनमाली ।
दिन बितत कखन आयत तम निश घनशाली ॥
पूजा वेला नहि टरय, रहय अवधाने ।
जे किछु अर्पित कल्पित रस रूप विधाने ॥
नहि हो अबेर बेरहि मे गंध सुरभि भरि ।
अर्चना हेतु अर्पित प्राण क रस झरि झरि ॥
जीवन सुमन क जे शेष अशेष बना ली ।
झटपट माला मे गाँथि लेब वनमाली ॥

१२

'आमार ए गान छेड़ेछ तार सकल अलंकार'

गान हमर तान तोड़ि स्वर लिपि टा बनले ।
गद्य मात्र पद्य सकल अलंकार झरले ।।
रखलहुँ समीप अहँक साज धुनि विहीन ।
अवसन तन छीन तार - हीन मन क बीन ।।
अलंकार भार मध्य मिलन क व्यवधान ।
स्तुति धुनि केँ छाप घड़ी - घंट तुमुल ध्वान ।।
गर्व निज कवित्व केर गलित द्रवित आब ।
चरण निकट पहुँचि महाकविक चुमओ भाव ।।
यत्न करब जीनन धरि वेणु सरल एक ।
गढ़ब सदय देव ! अपन सुरक भरब टेक ।।

'राजार मतो वेशे तुमि साजाओ जे शिशुरे'

धूलि धूसरित शिशु कें जननी राजवेश मे आनि ।
मणि-रत्न क माला पहिराबी बसन रेशमी दानि ।।
धुरखेलि क सात्त्विक आनंद क नहि राजस शुचिवेश ।
हाय ! यत्न मंडित पुनि खंडित कयल सकल निःशेष ।।
फटि जायत कौशेय वसन टुटि जायत रत्न क तार ।
धूलि धूसरित मलिन वेश; होयत चिन्ता क प्रसार ।।
सोचि सोचि ओ भेल हंत ! क्रीडा-कौतुक सँ दूर ।
हीलि-डोलि नहि सकय मंद स्वच्छंद गमन नहि पूर ।।
माँ ! की लाभ ? कहू राजसमणि रत्नहार पहिराय ।
राजवेश मे साजि मुक्त शिशु कें बंधन ओझराय ।।
द्वार खोलि दी, एक बेर पुनि दौड़ि खेड़ि - मैदान ।
मुक्त वायु, आलोक, माटि-पानि क रस ली अबदान ।।
शीत-रौद मे, झर - बसात मे झुंड - झुंड जन मेल ।
चौदिस कल कल लोक कंठ दिन भरि नित-नूतन खेल ।।
मुक्त जगत ओ अवधूत क अछि, नहि भूपति क प्रवेश ।
जननी, हंत ! धूलि-धूसरिते शिशुहि क ततय निदेश ।।

१४

'आर आमाय आमि निजेर शिरे बइब ना'

अपने अपनहि भारेँ न माथ भरिआयब ।
ने द्वार बैसि हम गीत गरीबी गायब ।।
हम पटकि देब सभ माथ क बोझ चरन मे ।
ने कहब सुनब पुनि ने चिन्तब किछु मन मे ।।
ने लेब खबरि ने अपने केँ चरिआयब ।
अपने अपनहि भारेँ न माथ भरिआयब ।।
वासना हमर छुबि लेतै किंचित ककरो ।
अपने सङ तम मे भोतिया देतै तकरो ।।
हम जे किछु आंजुर मे अभव्य भरि आनल ।
ने पुनि ओहि अशुचि क चर्च करब मन ठानल ।।
जे अहँक प्रेम सुर भरल न तार बजाबब ।
अपनहि अपना भारेँ न माथ भरिआयब ।।

'जेथाय थाके सबार अधम दीनेर हते दीन'

दलित पतित दीनहुँक दीन जहि ठाँ अछि कनइत ।
देवदेव ! अछि चरण अहाँक ततहिँ शुचि पड़इत ॥
जे उदस्त जगतक जतबे जे जत निरस्त अछि ।
जतहि अकिञ्चन ततहि अहँक पद रज प्रशस्त अछि ॥

जखन प्रणति हित अपन नम्र मस्तक छी नवइत ।
रुकि जाइछ ओ हमर प्रणामी पद रज तकइत ॥
अपमानक आघात बीच दाबल उदस्त अछि ।
जतहि अकिञ्चन ततहि अहँक पद रज प्रशस्त अछि ॥

दुखी दीन अछि बसन - हीन, भूषनक प्रथा की ?
मूक कंठ मे मुखर वेदना व्यथा कथा की ?
जे अस्तित्व - विहीन अहंकारो निरस्त अछि ।
जतहि अकिञ्चन ततहि अहँक पद रज प्रशस्त अछि ॥

धनक चकमकी, सम्मानक झकझकी बीच मे ।
ताकि रहल छी, किन्तु न निर्धन मलिन नीच मे ॥
ओ संगी छथि जकरा सँ अंगी दुरस्त अछि ।
जतहि अकिञ्चन ततहि प्रभुक पद रज प्रशस्त अछि ॥

'भजन-पूजन साधन-आराधना समस्त थाक पड़े'

भजन-यजन मे स्तवन-नमन मे नहि भेटत ओ झाँकी ।
हरि-मन्दिर केर द्वार बन्द कय, नयन मूनि की आँकी ?
जप-तप करिनहुँ, नाम-रूप-लीला केर करितहुँ सुमिरन ।
अगम अगोचर अलख प्रभुक नहि हो मन्दिर मे दरसन ।।
अन्तर दृगकेँ खोलू, देखू, कत छथि ओ अन्तर्यामी ।
आइ धरातल पर उतरल छथि गरुडध्वज नभगामी ।।
देखू, एम्हर कोड़ि धरती केँ जे उपजाबथि चासे ।
गिरि दुर्गम केँ काटि बनाबथि पथ शत सतत सहासे ।।
झाँट-बसात न गनथि, रौद-शीतेँ न चित्त हो भीते ।
माटि-पानि मे रितल तितल तन, विपतिहुँ गाबथि गीते ।।
बुझिअ मुक्ति-मौक्तिक नहि भेटय मुक्ति मुक्ति पद रटने ।
स्वयं मुक्तिदाता सृष्टिक सङ छथि निबद्ध रस-रचने ।।
श्रमिक समाने एकतान भय रमब कर्म मे जखने ।
धौत वसन केँ त्यागि धूलि मे सनब नित्य रुचि रखने ।।
फुलडालीक फूल-दल तेजब ध्यानक अनुसंधाने ।
फटत रेशमी धौत, धूलि-धूसरित होयत परिधाने ।।
झरत स्वेद-कण संग कर्मकर लोकक अंग कहाय ।
तखनहि मन-मन्दिरक देवता केर दर्शनक उपाय ।।

१७

'अनेक कालेर यात्रा आमार अनेक दूरेर पथे'

दीर्घ अवधि यात्राक काल हमर दूर ।
पथ असीम चलब हमर कखन होयत पूर ।।
प्रथम किरण रथ चढ़ि हम बहरयलहुँ अंत ।
ग्रह-नखतक, गिर-गहनक चिह्नित पथ हंत ।।
कते लोक लोकांतर प्रांतर कय पार ।
दूर अछि ओहू सँ हमर लक्ष्य द्वार ।।
आँखि पाँखि लै उड़ैछ चटुल मन विहंग ।
रोकि बंद कयल जखन सहज अंतरंग ।।
कहल, 'अहाँ एतहि' तखन उठल ध्वनि तरंग ।
'आउ आउ' शत सहस्र स्रोत कत उमंग ।।
'कहाँ अहाँ, अहाँ कहाँ ?' भरल ध्वनिक राशि ।
अश्रु-बिन्दु सिन्धु उत्तरंग भुवन भासि ।।

'हिया जे गान गाइते आशा आमार हय नि से गान गाओया'

गीत ओ न गाबि सकल हमर कंठ प्रान ।
अटकल अछि एखनहु ओ कतहु सुर वितान ।।
सीखल कत आइ धरि सप्तक स्वर बंध ।
एखनहु नहि सधल मनक साध छंद गंध ।।
कंठ नहि माजल स्वर साधल नहि अंत ।
आकुल मन प्रान गान हेतु आइ हंत ।।
आइ धरि मन - बन मे फूटल नहि फूल ।
पवन बहल, विकसल नहि दल सुरभि मूल ।।
मधुक बोल हो न घोल नहि विकास बानी ।
किंतु मंद ककरहु हम पद धुनि अकानी ।।
द्वार होइत चलथि हमर पुनि ओ कत बेर ।
दिन भरि सजबैत सेज भय गेल अबेर ।।
लेसल नहि दीप कोना बजा सकब नाथ ।
आशे मात्र भरल हृदय पात्र रिक्त हाथ ।।

१६

'आमि हेथाय थाकि शुधु गाइते तोमार गान'

हम केवल आयल छी गाबी गीत अहांक कनेक ।
सभा-भवन मे भेटओ हमरा आसन नाथ ! छनेक ।।
हम लघु, काज कोन आयब कहु, प्रभुक अनंत महत्त्व ।
क्षुद्र प्राण मे बाजय केवल सुर मे प्रणयक तत्त्व ।।
देव ! जखन देवालय मे हम आराधन मे लागी ।
देब तखन आदेश, गाउ नीरव निशीथ मे रागी ।।
भोर जखन गगन क वीणा मे स्वर्ण किरण स्वर योजित ।
तखन मान एतबे चाही जे रही न हम अनियोजित ।।

२०

'जगते आनन्द यते आमार निमन्त्रण'

विश्वक वेदी मे आनन्दक यज्ञ, निमन्त्रण भेटल ।
धन्य मानवी जन्म, प्रान तन मे, मन मे रस फेंटल ।।
नयन रूप-वन मे घुमइछ, पुनि श्रवन मधुर धुनि पुंज ।
अहँक यज्ञ मे भार भेटल, बाँसुरी बजाउ निकुंज ।।
अपन राग धुनि मे भरवे सभ उरक वेदना हास ।
समा जाय जयधुनि सुनि देखी छवि पुनि पूरी आस ।।

२१

'प्रेमेर हाते धरा देब ताइ रयेछे बछे'

सभ किछु हम देब अरपि प्रेमक पद धूलि ।
एही लेल बैसल छी युग युग जग बूलि ।।
भेल जे विलंब तकर दोषी हम सत्य ।
विधि विधान बद्ध करय विवश क्षुद्र मर्त्य ।।
ससरि सकल तखन जखन दंड भोगब घूलि ।
सभ किछु हम देब अरपि प्रेमक पद धूलि ।।

२२

मेघक टिक्कड़ बढ़ले जाइछ छापल छतहि अकासो ।
गगन-दीप गेल मिझा पलहि मे रहल न कतहु प्रकाशो ।।
हमरा पुनि की हेतु अहाँ बैसा गेलहुँ एकाकी ।
द्वार देश मे बैसि हताश उदास शून्य दिस ताकी ।।
काज-तिहार बीच हम बाझल रही समाजक माझे ।
कर्मबहुल भोरे सँ कर्मशिथिल छन जा धरि साँझे ।।
अहिँक आश-आश्वासक बल केवल हम मनमे आँकी ।
हमरा पुनि की हेतु अहाँ बैसा गेलहुँ एकाकी ।।

अहाँ न देखि पड़ी यदि हमरा करइत नित अवहेला ।
कहू कोना हम काटि सकब ई रसमय बादल-वेला ।।
दूर दूर धरि, क्षितिज छोर धरि, अपलक नयन निहारी ।
चकित थकित मन प्रान प्रतीक्षा-विकल बिफल अनुहारी ।।
प्रश्न अशेष शेष उत्तर की कलन - आकलन बाकी ।
हमरा पुनि की हेतु अहाँ बैसा गेलहुँ एकाकी ।।

२३

'ओगो मौन, ना यदि कओ नाइ कहिले कथा'

मौन साधि अहाँ यदि अवाक बनल रहबे ।
नीरबता मात्र अपन हृदय पात्र भरबे ।।
स्तब्ध बनल रहब जेना यामिनी निशीथ ।
निर्निमेष दीप बारि गुपचुपे अगीत ।।
हृदय-नीड़ पीड़-विहग पोसल हम करबे ।
मौन साधि अहाँ यदि अवाक बनल रहबे ।।
उठत भोर गोर-गोर उदित मुदित प्राची ।
अन्धकार हटत, फटत तिमिर पट पुराची ।।
अहँक बचन कनक किरन गगन बीच पुंजित ।
तखन हमर मन क विहग करत भुवन गुंजित ।।
अहाँ अपन मलय गान पवन परस भरबे ।
मौन साधि अहाँ यदि अवाक बनल रहबे ।।

'जे दिन फुटल कमल कि छुइ जानि नाइ'....

कमल सुरस फुटल जखन
हम नहि किछु बुझल तखन
छलहुँ हमहुँ उन्मन हे ! नव प्रभात दानी ।
रिक्त हमर कुसुम पात्र
सकलहुँ नहि समटि मात्र
छलहुँ हम अचेत, चेता देलक क्यौ न प्रानी ।।
कखनहु मन प्रान उमड़ि
स्वप्न देखि चेति सम्हरि,
चकित भेलहुँ परसि दछिन पवन वन-वनानी ।।
गंध पवन उड़ा उड़ा,
दिग् - दिगंत घुमा फिरा,
उपवन मे आनि देल मधु ऋतु रति रानी ।।
जनइत के छला तखन
वन बन घुमि एला जखन
एखन बुझल हृदय कुसुम भरइछ मधुवानी ।।

२५

'एबार भासिये दिते हवे आमार एइ तरी'

एहि बेर हमर तरणी कें पार लगबिऔ ।
तटबंध छौड़ा' नाविक पतबार पकड़िऔ ।।
बैसले नदी - तट पर कत काटब वेला ।
अछि अति असह्य हमरा विलमब तट-खेला ।।
चल गेल वसन्त हँसा कय कानन उपवन ।
हम आब करब की लय दल फूल विरस सन ।।
जल मे तरंग कत रंग तरुक तर मर्मर ।
उठइछ, भरइछ बहुरंग रिक्त पुनि अंतर ।।
घन गगन पवन बन-वन मे अनुखन सिहरन ।
मोहि पार बाँसुरी बाजि उठल उर धड़कन ।।

२६

'आज श्रावण घन गहन मोहे'....

आइ साओन घन गहन गंभीर ।
चरण पड़इछ जतय भरइछ नीर ।।
स्तब्ध नीरव निशा शून्याकार ।
सभक दृष्टि बचाय पहुँचो द्वार ।।
आइ प्रातहु नयन मुद्रित सुप्त ।
व्यर्थ वायुक सोर होइछ लुप्त ।।
नील नभ घन केँ हुलासि हकारि ।
मिलन हेतुक दय रहल होहकारि ।।
कलित कूजन शून्य कानन कुंज ।
बंद सभक दोआरि घर घर मुन्न ।।
पथिक एकाकी अहाँ के आइ ।
बिजन पथ केर पार दौड़ल जाइ ।।
हे अनन्य सखा, परम प्रिय मित्र ।
नहि मेटायब मधुर स्वप्नक चित्र ।।
हे सुमुख, सम्मुखहि नहि अबहेलि ।
छलि न अहँ चलि देब हमरा ठेलि ।।

२७

'आज झड़ेर राते तोमार अभिसार'....

आइ झंझा झोंक राति अन्हार ।
प्राणधन हे ! अहिँक ई अभिसार ।।
गगन कानय जेना प्रेम-हताश ।
नयन मे नहि नीन मिलन क भास ।।
खोलि घर क दोआरि प्रियतम-पंथ ।
बेरि बेरि निहारि सिहरी हंत ।।
बाहरी संसार नहि किछु सूझ ।
पंथ मिलन क कोम्हर किछु नहि बूझ ।।
दूर दुस्तर नदी पार निकुंज ।
गहन वन संकुल तिमिर तरु पुंज ।।
अंधकार अपार, दुर्बह धार ।
बंधु ! जाय नुकाय रहलहुँ पार ।।

'दिवस यदि साङ्ग हल, ना यदि गाहे पाखि'

दिवसक हो अवसान किरण कण बिखरि गेल हो ।
करइत नहि हो गान, तान खग बिसरि गेल हो ।।
थाकि स्वयं पवमान रुद्धगति शिथिल पड़ल हो ।
देव ! तानि तम - तोम हमर मन गगन झँपल हो ।।
धरतो केँ रजनी चादरि सँ झाँपि सुताबी ।
निशि मुद्रित शतदल सम हमरहु नयन मुनाबी ।।
बीचहि पथ पाथेय घटल सभ फटल वसन तन ।
धूलि धूसरित पथिक समाने व्यथित क्वथित मन ।।
शक्ति सकल निःशेष शेष वेदना व्यथा घन ।
करब गोपनहिँ करुणा छाया प्रणय-कथा खन ।।
पोछि लाज संकोच रजनि घन तिमिरक सुषमा ।
सुधा सलिल अभिषेक जुड़ाबिअ उषा मधुरिमा ।।

२६

'से जे पाशे एसे बसेछिल तबू जागि नि'

लगहि आबि बैसल छल पहु, कहु किऐ निन्न नहि टूटल ?
हतभागिनि मातलि छलि केहन करहि परसमनि छूटल ।।
छल नीरव निशीथ तखनहि औ चुपहि पहुँचला आबि ।
बीन हाथ लय गुनगुन मधुधुनि पुनि किछु उठला गाबि ।।
जकर राग धुनि सपनहु मे प्रतिधुनित निरंत गभीर ।
हाय ! केहन मातलि हम निन्नहुँ सुनलहुँ गीत अधीर ।।
जगइत देखल, दछिन पवन बहले जकरे मद माति ।
गंध-अंध चंचल अंचल छल अंधकार घन राति ।।
जीवन बाती व्यर्थ जरै अछि पल - पल विफल बितैछ ।
लग लगिचायल जेना पड़ायल मिलनहु विरह बरैछ ।
हुनक सुमन-मालाक परस रस उर परिसर नहि जूटल ।
लगहि आबि बैसल छल पहु, कहु किऐ, निन्न नहि टुटल ?

३०

'कोथाय आलो, कोथाय ओरे आलो'

कतय ओ इजोत, ओ इरोत कतय गेल ।
विरह अनल जरा' ज्वाल माल जगा देल ।।
दीप अछि अशेष एखन शिखा शेष भेल ।
मरण वरण उचित जँ इजोत मिझा गेल ।।
वेदना क सखी गाबि,
कहय प्राण तोरा लागि;
एखनहु धरि सहय हृदय,
ठाकुर छथि रहल जागि;
घन निशीथ अंधकार,
मेघ उमड़ि बरस धार ।
एखन ककर लेल प्रान विकल जागि गेल ।।
एना कोना कहथि कुहरि,
अश्रु-बिंदु झहरि झहरि,

बुंद बुंद मघा मेघ,
सगर गगन घहरि घुहरि;
बिजुलि छिटकि छनहि छपित नयन झाँपि गेल !
जानि ने कि कते दूरे,
गान सुनी धीर सुरे;
ओही बाटे - घाटे प्रान,
घिचय निविड तिमिर तीरे;
विरह पवन झोंक - नोक ज्योति चाँपि गेल !
कतय ओ इजोत, ओ इरोत कतय भेल !!
मेघ गरजि बजा रहल,
हवा झोंक हँका' रहल,
समय बितल जाय सकल
जैब कोना हैत सफल ?
निविड निशा कलुष दिशा
मेघ निकष कनक कसा'
प्रेम दीप बारि लेब, ढारि प्रान तेल !

Scanned by CamScanner

३१

'जड़ाये आछे बाधा, छाड़ाये जेते चाइ'

बान्हल छी, छानल विविध विघ्न बाधा ।
छुटइत हो किन्तु हृदय-वेदना न आधा ॥
मुक्ति हेतु बंधन सँ अहँक निकट पहुँची ।
भय सकोच, लाज रोच, पद पद हम सकुची ॥
जनइत छी, अहाँ हमर जीवन-ऐश्वर्य ।
अनुपम धन, प्रेय - श्रेय, ओजस - सौन्दर्य ॥
सकलहुँ अजबारि हम न तदपि हृदय सद्म ।
झपने अछि अपनहुँ केँ हमर मलिन छद्म ॥
मृत्यु बुझी घृणा करी विमुख विरुख अंत ।
तदपि ली बटोरि विकल तिमिर स्वयं हंत ॥
रने-वने, रयनि-दिने, प्रेम घृनेँ, मन-विमनेँ ।
पहुँचि अहँक लगहुँ फिरी भय संकोच विवश छनेँ ॥

३२

'आमार नाम टा दिये ढेके राखि जारे'

झाँपि देल हम नाम आवरण बीच जकर रक्षा मे ।
भरइछ से घुलि घुलि उनटे नामक कारा-कक्षा मे ।।
नभ चुंबी नामक घेरा हम निस-दिन जते बढ़ाओल ।
तते निबिड तम तोम पसरि हमरहि मनकें अन्हराओल ।।
चेकी पर चेकी दय उँच कय नाम रूप प्राकार ।
जोड़ल, कतहु छिद्र नहि राखल जतय पवन संचार ।।
मिथ्या नाम रूप केर बंधन मे कसनहु मन ढ़ील ।
जते जोगाओल तते गमाओल, सत कहि असते मील ।।

३३

'एकला आमि बाहिर हलेम तोमार अभिसारे'

हम तँ चललहुँ एकसरे अहँक अभिसार ।
पुनि के नभ बिच सङ चुपहिँ करय संचार ।।
छोड़बय चाही कतविध हम ओकर संग ।
घुरि चली, ससरि पुनि बढ़ी विविध गति भंग ।।
बुझि पड़ल छनहि छुटि गेल, गेल दुर्भाव ।
हम पुनि भेलहुँ निर्द्वंद्व निरापद आब ।।
लगले परन्तु ओ धरती कँपबैत ।
पुनि पुनि अपन मन्तव्य कथा सुनबैत ।।
ओ बहुरंगी बहिरंगी छाया तुच्छ ।
निर्लज्ज हमर ओ अहम्भाव छल छुच्छ ।।
ओकरा सङ लय अपन प्रियतम क द्वार ।
एकान्त शान्त हम जायब कोन प्रकार ।।

३४

'बंदी, तोरे के बेँधेछे एक कठिन क'रे ?'

" बंदी ! कहु कहु, कसि गसि देलक के एहन बंध !"
" अपनहिं प्रभु, की पुनि कहब अधिक हम स्वयं अंध ।
कल्पना कयल, सभ सँ बढ़ि चढ़ि हम प्रबल भेलहुँ ।।
हम अपन कोष मे प्रभुक विदित निधि जोगा लेलहुँ ।
निन्ने मातल प्रभु सेजहिँ पर पुनि ओलड़ि गेलहुँ !
जगलहुँ तँ देखल अपना कें निज कोष बंद ।
अपनहि प्रभु, की पुनि कहू अधिक हम स्वयं अंध ।।"

"बंदी, अहाँक बंधन गढ़लक के वज्र बंध !"
अपनहि प्रभु, की पुनि कहब अधिक हम स्वयं अंध ।।
अपनहिँ हाथेँ अति सावधान यतनेँ गढ़लहुँ हम दृढ़ सीकड़ि
सपना छल, अपन प्रतापेँ जगकेँ लेब जकड़ि ।
बनि अति स्वतंत्र, स्वच्छंद जगत मे चलब अकड़ि ।
हम बना लेब जन-जन केँ बरबस दास पकड़ि ।।
दिन-राति लौह-शाला मे भट्ठी जरा जरा ।
कत पोटि अयोघन बना लेल हम वज्र कड़ा ।।
निर्माण शेष देखल अशेष हम वज्र बंध ।
जे लेल जकड़ि हमरहि, की कहबे स्वयं अंध ?

३५

'संसार ते आर जाहारा मा लोभाको'

जग मे जे जत प्रेम देथि तत
बान्हथि बंधन - दाम ।
प्रेम अहाँक महान मुक्त-
धारा बहइछ उद्दाम ।।
अहाँ स्वयं छी कतहु नुकायल
बंधन मोचन हेतु ।
दासहु केँ बनबैछी प्रभु
अपने प्रभुता केर केथ ।।
स्मृति मे रखबा हेतु आन जन
देथि न पल अबकाश ।
हम विस्मृति - पथ नहि भटकी
तेँ दैछी स्मृतिक प्रकाश ।।
बजवी बा नहि बजवी बौआ
अहाँ रही समीप बसैत ।
हमर खुशी किछु, किन्तु अहाँक
खुशी हमरहिँ कबैत ।।

३६

'तारा दिनेर बेला एसे छिल आमार घरे'

ओ दिन अछैत घर हमर आबि ई बाजल ।
हम रहब पड़ल कोनहु कोनहि मे दाबल ॥
पुनि संग देब देवक पूजन - अर्चन मे ।
पूजान्त प्रसाद लेब किछु कहलक पागल ॥
एहि रूपें दीन दरिद्र वेश घर पैसल ।
संकुचित चित्त कोनहु कोनहि मे बैसल ॥
छल जखन रजनि गंभीर बैसि देवालय ।
लय हाथ मलिन पूजा बलि चलि सेबा लय ॥

Scanned by CamScanner

'तोमाय आमार प्रभु करे राखि'

रहि दास अहाँ केँ प्रभु जीवनक बनाबी ।
हम अहंभाव एतबे टा शेष बचाबी ।।
पल खुजय अहिँक छवि छलकि उठय दृग जलमे ।
सब किछु डुबाय दी अहँक कान्ति-निर्झर मे ।।
निशि-दिन पल-पल एतबे चित आश बसाबी ।
रहि दास, अहाँके प्रभु जीवनक बनाबी ।।
अद्वैत भाव ततवे हमरा अछि वांछित ।
नहि हमर अहम् त्वम् अहँक करय आच्छादित ।।
अछि श्वास-श्वास मे ई आशा-विश्वासे ।
लीला-रस रचइत बान्हब निज भुज-पाशे ।।
जीवन भरि एहि बंधनक बनल रह दाबी ।
रहि दास, अहाँके प्रभु जीवनक बनाबी ।

'चित्त जेथा भयशून्य, उच्च जेथा शिर'

मन मे भयक न लेश शेष नहि छन्द बाधना ।
झुकय न माथ अनाथ, नाथ कहि, हीन भावना ।।
दिन रजनी हो अपन, अपन अवनी अकाश हो ।
घर आङन मे अपन साधना केर प्रकाश हो ।।
ज्ञान मुक्त, उन्मुक्त विचारक पावन धारा ।
खण्ड खण्ड संकीर्ण बनय नहि वसुधा कारा ।।
अंतरंग भावक बाही बहिरंग शब्द हो ।
मंगल वर्षी घनक घोष अन्वर्थ शब्द हो ।।
जतय तुच्छ आचार बालुका शुष्क न शोषक ।।
स्वच्छ विचार प्रवाहक नहि कथमपि अवरोधक ।
नहि पौरुष कें परुष प्रकृति करइत कठोर हो ।।
कर्म धर्म चिन्तन दर्शन सभ अहिंक जोर हो ।
वरदहस्त लालित पालित भारत वसुधा मे ।।
बसय एहन पुनि अमृतधाम शुभ स्वर्ग ललामे ।

३६

'तब काछे एइ मोर शेष निवेदन'—

अन्तिम हमर निवेदन अहँक समीप ।
हरब प्रबल भय तनुता मनक प्रतीप ।।
अन्तर हृदय निगूढ क्षीणता छिन्न ।
करब कृपा कय भेद भाव सभ भिन्न ।।
ओज भरब जहि सँ जे जत सुख भार ।
सुख सँ सहन करी हम विगतविकार ।।
भुजबल देब देव ! दुस्तर दुख धार ।
विनु दुख अनुभव हँसइत कय ली पार ।।
भक्ति भाव भरबे जे हृदयक शक्ति ।
फलित सुकृति जहि सँ पुष्पित अनुरक्ति ।।
दृष्टि देब लघु कें हम गनिअ न छोट ।
नहि पुनि माथ झुकाबिअ कतबहु मोट ।।
सबल करब मन निशि दिन नियमन शील ।
लघुता त्यागि महत् दिस भए गतिशील ।।

'भेवे छिनु जा हबार तारि शेषे'

सोचल जे किछु भावी छल से भेल ।
यात्रा केर अवसान मनहि बुझि लेल ।।
ने छल पथ गन्तव्य न गति उद्देश ।
सधि सठि गेल जते पाथेय सनेस ।।
जर्जर जीवन मलिन जीर्ण परिवेश ।
ससरि जाइ कहुँ वन एकान्त निवेश ।।
किन्तु आइ देखइत छी नूतन सृष्टि ।
नित नवीन अंकुरित भाव नव दृष्टि ।।
जखन पुरातन भाषा मुख सुखि गेल ।
तखनहि नूतन तान ध्वनित उर भेल ।।
जे प्रचलित पुरान पथ सीमा शेष ।
पहुँचि ततहि पुनि नूतन देश प्रवेश ।।

४१

'तखन करि नि नाथ, कोनो आयोजन'

तखन न छल आयोजन कोनहु ने सत्कार प्रकार ।
विनु संकेत सकल साधारण बिच अयलहुँ सरकार ।।
परिचित नहि, केवल हँसइत किछु अन्तर मे भरि देल ।
अतिथिदेव ! कत तिथि मुहूर्त बसि चिह्न अमिट लिखि देल ।।
आइ अचानक चिर दिनपर अक्षर दिस पड़ितहिँ दृष्टि ।
सुख दुख स्मृतिक संग धूमिल दल भास्वर युगहिक सृष्टि ।।
धुरखेले धूसर तन बुझि जनि फिरब अवज्ञा भाव ।
खेलहुँ रवि शशि भासित शुचिपद ध्वनि मे ध्यानक भाव ।।

४२

'तोरा शुनिस नि शुनिस नि तार पायेर ध्वनि'

सुनि न पड़ल चरनक धुनि नूपुर धुनि कान ।
केहन छी अकान प्रान ! केहन छी अकान ।।
अबइत छथि नहु-नहु पहु पद पद मतिमान ।
युग युग सँ दिवा निशा पल पल अभियान ।।
गबइत छी गीत जखन जत जे कल तान ।
सकल सुरेँ बाजि उठय पद गति धुनि गान ।।
मंद मंद फागु पवन उपवन ओलड़ाय ।
कखनहु पुनि बदरा भदराक घहराय ।।
सुरभित पथ सिंचित रस रथ चढ़ि अगुआय ।
बरन बरन गीत चरन वीन उर बजाय ।।
सुखद परस परसमनिक परसि सगर प्रान ।
अबइत छथि, हुनि पदधुनि सुनि पड़इछ कान ।।

४३

'आमार मिल लागि तुमि आसछे कबे थेके'

मिलन हेतु हमरा सँ आबी युग युग सँ अहँ हंत ।
चान सुरुज नहि झाँपि सकै छथि अहँक व्योमकेर पंथ ।।
तते अवधि धरि साँझ सवेरे अहँक चरन धुनि मंजु ।
आमंत्रण हित गुप्त दूर बनि कुंज निकेतन पुंज ।।
पथिक कथिक थिक हर्ष वर्ष जे व्यापित उर अनजान ।
पुलकित हुलसित करइत रहइछ रहि रहि हमर परान ।।
समय आब से आबि तुलायल अवसित कृत्य विधान ।
महाराज, उपवन सौरभ लय अहिँक बहय पवमान ।।

४४

'पथ चेये तो काटल निशि'....

बितल राति, ताकि बाट थाकि गेल चित्त ।
अलस शिथिल सुप्त प्रात हो कदाच बृत्त ।।
वनक बेढ़ बीच भवन आबि ठाढ़ द्वार ।
करथि प्रिय प्रवेश टोक रोक ने बहार ।।
चरण चाप धुनिहु, हमर टूटय यदि न निन्न ।
शपथ हमर, पड़ल रहय देब दृग अभिन्न ।।
विहग नाद मधुर मधुर स्वच्छ शान्त भोर ।
वकुल गंध मदिर मलयपवन बहय जोर ।।
एखनहु सुख समय तजिअ रसहुक यदि बेर ।
पहुँचथि प्रिय, तदपि रहय देब निन्न भेर ।।
जखन मधुर परस पाबि सुस्मित छवि देखि ।
प्रथम पलक खुजय समुख सकी हुनि परेखि ।।
हमर भोर तखन गोर मलयज मधु गंधि ।
दिव्य ज्योति उदित जखन नाथ प्रणयबंधि ।।
अपनहि कर देथि उठा चेतना जगाय ।
दोसर ने आबि हमर निन्न भाङि जाय ।।

४५

'তব সিংহাসনের আসন হতে এলে তুমি নেমে'

सिंहासन सँ उतरि अहाँ अयलहुँ, हम भेलहुँ नेहाल ।
विजन कुटी मे पहुँचि हमर अहँ अँटकि गेलहुँ किछु काल ।।
एकाकी हम मनहि मने गुनगुन किछु गबइत गान ।
छलहुँ मगन, अहँ गगन देश मे जुमलहुँ सुनि स्वर तान ।।
अहँक सभा बिच कते गुनी छथि गबइत गान अमंद ।
कोना अकानय पहुँचि गेलहुँ एहि गुनहीन क स्वर छंद ।।
विश्वक तान अनंत करुण स्वर झंकृत सहसा एक ।
आबि सहज अपनाय अहाँ बुझलहुँ निज स्वरहिक टेक ।।
वरणमाल लय हाथ उतरि सिंहासन सँ तत्काल ।
विजन कुटी मे पहुँचि हमर अहँ, अटकि गेलहुँ किछु काल ।।

४६

गगन चुम्बि कनक भवन आसन मनि छाड़ि ।
नाथ आबि ठाढ़ हमर विजन कुटी द्वारि ।।
अपन मने गबइ' छलहुँ एकसर किछु गीत ।
छीन कंठ मंद छंद भाब किछु अगीत ।।
कोना पड़ल कान तान बिबश सहज प्रीत ।
विजन कुटी द्वारि हमर आबि सुनब गीत ।।
प्रभुक सभा भवन बीच गुनी जन कतेक ।
तदपि रुचत अगुनिक गुन - हीन गीत टेक ।।
विश्वक संगीत रीति छलछल आनन्द ।
करुण सुरक एक तान पहुँचल अति मन्द ।।
विह्वल प्रभु दौड़ि पड़ल बरण - माल हाथ ।
हमर विजन कुटी द्वारि आबि ठाढ़ नाथ ।।

४७

'आलो आमार, आलो ओगो आलो भुवन भरा'

हमर ई इजोत सगर भुवन भरि इजोत ।
नयन - डगर, हृदय - नगर, कतहु ने इरोत ।।
नाचि नाचि ई इजोत प्रान नचा गेल ।
गाबि गाबि ई इजोत कंठ सजा गेल ।।
हृदय बीन तार तार झंकृत कय देल ।
दछिन पबन मनक विपिन सिहरनि भरि गेल ।।
जगमग अकास सुरभि महमह बसात ।
मुग्धा वसुधाक अधर हँसइत प्रभात ।।
चंचल टिकुलीक पाँखि अंचल वितान ।
छापि रहल नाचि रहल जूही छविमान ।।
कनक किरन रङल जलद मोति बरसि गेल ।
सुरसरि तट सुरतरु कत फूल झहरि गेल ।।

४८

'तोहार क छे चाइ नि किछु जानाइ नि मोर नाम'

नहि किछु कखनहु मनहु कोनो याचना, अहाँ सँ पाबी ।
परिचय करबा हेतु पथिक ! हम नाम न अपन सुनाबो ।।
जखन कयल प्रस्थान अहाँ हम रहलहुँ चुप, नहि टोकल ।
एकसरि पनिघट नीम गाछ केर छाया मे किछु सोचल ।।
लय जल कलश गेलि सब जनि घुरि घर-दुआरि दिस जहुखन ।
कहल—चलह भयगेल बेर, हम अनसुनि बैसलि तहुखन ।।
अलसायलि सनि कोनहु भावना बीची मे भसियाइत ।
नहि अकानि सकलहुँ पद-धुनि ओ अहँक पथिक! घुरिआइत ।।
अयलहुँ अहाँ बाजि उठलहुँ पुनि करुण नयन स्वर कातर ।
'पथिक तृषातुर छी हम' सुनतहिँ चौंकि गेलहुँ हम आतुर ।।
ढारि कलश रस भरि देलहुँ आँजुर, बुझि प्यासेँ तबधल ।
मर्मर ध्वनि कय उठल पत्र दल, कोकिल चहुँदिस कुहकल ।।

गाम बाट केर मोड़-मोड़ पर गाछ-बिरिछ जत जे छल ।
फूल फुलायल सौरभ भारेँ झुकि-झुकि झुलइत जे छल ।।
जखन नाम-परिचय जिज्ञासा कयल, सकुचलहुँ लाजे ।
स्मृति उर मे की हेतु जोगाओल हमर एहन की काजे ।।
सलिल-बिंदु दुइ अंजलि सौंपल मेटल जेहि सँ प्यासे ।
एनवे स्मृति संवल हमरा जीवन मे जीवित आशे ।।
पनिघट नीम गाछ पर बैसल कुचरय दुपहर काग ।
पात पात कंपित अछि, हम बैसल उन्मन अबिराग ।।

४६

'एइ तो तोमार प्रेम, ओगो हृदय हरण'

अहँक प्रेम पाबि अपन हृदय गेल हेराय ।
देल कनक जोति पात-पात कें नचाय ।।
अलस मधुर विधुर मेघ गगन उड़ल जाय ।
पवन मन्द गन्ध-मदिर दिस-दिस ओलराय ।।
अरुण किरणकेर इजोत स्रोत दृग बहाय ।
अहँक वचन प्रेम-सघन प्रान मे समाय ।।
वदन अहँक झुकल हमर मुख रुखि हुलसाय ।
नयन मिलल, हृदय हमर चरण छुबि अघाय ।।

५०

'हे मोर देवता, भरिया ए देह प्राण'

हे हमर देवता, हे अमर देवता !
मृत्तिका पात्र ई यदपि लघु मात्र ई,
अमृत आकंठ अछि भरल रसगात्र ई,
कोन रस पान अछि इष्ट रुचि पेयता ।
हे हमर देवता, हे अमर देवता ।।

हमर दृग-बिंब मे सृष्टि प्रतिबिम्बिता,
हमर श्रुति कोष मे गीत तव संचिता,
रूप ध्वनि रम्य अपनहिक रुचि रंजिता,
हे हमर देवता, हे अमर देवता ।।

हमर मन प्रान मे अहँक रचना क छवि,
देल बानी नवल कल्पना भरि सुकवि,
प्रीति रस गीति गति छवि अहिंक अंचिता ।।
हे हमर देवता, हे अमर देवता ।।

५२

'जे न शेष गान मोर सब रागिणी पुरे'—

हमर शेष संगीत राग परिवीत रे ।
स्वर विशेष आनन्द अशेष प्रतीत रे ।।
जकर परस सँ पुलकित अवनि शरीर रे ।
जकर सुरस वश बहइछ मलय समीर रे ।।
मद मातल, भूतल पर घुमय अधीर रे ।
जीवन-मरण क जोड़ी पद गंभीर रे ।।
जकर झोंक झंझा क झंप झर नीर रे ।
जकर मधुर स्मृति बनइछ नयन क नीर रे ।।
वचन तरकस क बीच न अँटइछ तीर रे ।
जे नहि म्यान समाय तेहन समसीर रे ।।
से आनन्द हमर सुर मे परिवीत रे ।
हमर शेष संगीत अशेष अगीत रे ।।

५३

'कत अजानारे जानाइले तुमि कत घरे दिले ठाँइ'

अनचिन्हार कें देल चिन्हा पुनि बसा लेल घर दूरे ।
बन्धु बना आनहु कें लग मे बजा देल जे दूरे ।।
छोड़इत घर पुरान चित शंकित कंपित नव गृह नामे ।
मन नहि छल जें संगी छी अहँ संगहि पुनि नव धामे ।।
जनम-मरन कत भुवन-भवन जत ज़खन जतय पहुँचयबे ।
निश्चय ततहु अपरिचित कतबहु अपने सबहुँ चिन्हयबे ।।
केवल चिन्हि यदि लेब अहाँकें सब तरि सबहु चिन्हारे ।
रोक-टोक भय-शंका ने परिचय-पत्रक व्यवहारे ।।
देखल जतय रही जागल अहँ, की समीप की दूरे ।
अनचिन्हार कें देल चिन्हा पुनि बसा लेल घर पूरे ।।

Scanned by CamScanner

५३

अपरिचित छल कते तकरा सदय परिचय करा देलहुँ ।
कते घर मे बसा लेलहुँ, अपन पर केँ बना देलहुँ ।।
कते दूरी कते अन्तर, निकट सभ केँ बसा लेलहुँ ।
केहन छी बन्धुबर ! अपने, कते बान्धव बना गेलहुँ ।।
छुटै छल बास पहिलुक तेँ, छलहुँ अज्ञात कत जायब ।
बसल एकांत नव नव प्रान्त मे परिचय कतय पायब ।।
यदपि अपने पुरातन परिचिते चित ने तखन फुरले ।
केहन छी बन्धु सौजनियाँ, स्वजन सौजन्य मन पुरले ।।
जतय जत दूर जीवन - मरनकेर मरु - मालबा जग मे ।
चलब अपनेक संगहि हम सजग जग वा विजन बन मे ।।
जनम-जनम क सुपरिचय लय, न भय ने भावना आनक ।
अपरिचित-परिचित क जत भेद मेटत खेद मन-प्रानक ।।
अहाँ केँ जानि लेनहि सब अजानो जानब आनो ।
अहाँकेर छाँह मे रहने न कखनो भय न व्यवधानो ।।
हमर हे युग-युग क परिचित, पुरातन बन्धु लग दूरहुँ ।
बसा लेलहुँ, बचा लेलहुँ, अपन अंगहि लगा लेलहुँ ।
केहुन छी बन्धुवर ! अपने, अपन बान्धव बना लेलहुँ ।।

५४

'रङिन खेलेना दिले ओ राङन हाते'

रंजित कर किसलय मे क्रीडा-रंजनकेर उपहार ।
वत्स देखै छी, तखन बुझै छी, केहन वसन्त बहार ।।
अरुण प्रभातक आङन मे रंजित घन शिशु संचार ।
रंग-विरंग फूल उपवन मे विकसित कोन प्रकार ।
देखी जखन हाथ नेनाकेर नव क्रीडन - उपहार ।।
गीत गाबि चुटकी बजाय शिशु कें हम जखन नचाय ।
तरुक मञ्च पर पवन-विकम्पित पल्लव अर्थ बुझाय ।।
गिरि-निर्झर बहइछ कत की कलकल सरिता संगीत ।
तखनहि बुझइत छी सागर मे जल तरंग ध्वनि रीति ।।
जखन मधुर माखन-मिसरी शिशु-मुह मे दी उपहार ।
तखन स्वाद सुरसरिक बुझैछी अमृतसहोदर धार ।
फल मे कीहेतुक मधु रस ई, किऐ मधुर कुसिआर ।
जखन मधुर माखन-मिसरी शिशुकें दै छी उपहार ।
मुख कपोल कर चूमि झूमि नेना कें खेलबी कोर ।
तखन बुझैछी कत प्रकाश विकिरण करइछ मधु भोर ।।
कते मुक्त नभ-अभय शान्ति कत सुरभि मलय हिलकोर ।
चुमइत लालक गाल लाल खेलबै छी लै निज कोर ।।

५५

'ताइ तोमार आनन्द आमार' पर'....

त्रिभुवनपति ! हम ही अहाँक आनन्दक गति छी ।
भूतल अबतरणक हित छन्दक हमही यति छी ।।
परमेश्वर ! यदि हम नहि रहितहुँ प्रेमक दानी ।
कोना अहँक प्रेमेश्वर ! सजि सकितय रजधानी ।।
हमरहि संग लगाय घुमय मेला कत आबी ।
हमरहि उर-परिसर कें खेला-भूमि बनाबी ।।
विविध रंग-रस रभस तरंगित मन मे कन-कन ।
घुमइत रमइत छी रुचि-शुचि राजेश्वर, छन-छन ।।
प्रेमाकुल भक्तक अन्तर नित प्रेमोल्लासित ।
युगल मिलन बिच मिलित मूर्ति पुनि स्वयं विभासित ।।

५६

'तव रविकर आसे'....

रविक रश्मि निज भुज बढ़ाय भूतल धरि व्यापल आबि ।
दिन भरि हमर द्वारि पर ठाढ रही अहँ की नित भावि ।।
निविड तिमिर रजनीक जखन फिरि जाइछ जाल समेटि ।
तखनहु देखइत छी घन पटमे द्योतित वदन लपेटि ।।
अहँक नयन जल कनमे बहइछ उर आकुल संगीत ।
वाणी वीणक तार-तार सँ व्यथा गलित रस - गीत ।।
नीलम नील नीरदक कोमल श्यामल बरन रङाय ।
नित-नूतन घन बरन-बरन लघु-लघु परिधान सजाय ।।
यदपि निरंजन अंजन - रंजित दी आलोक मिझाय ।
मान हेतु निज करुणा - छाया सँ दी सेज सुताय ।।

५७

'एकाधारे तुमिइ आकाश, तुमि नीड'

एक आधार अहीं गगन, अहीं भूमि ।
प्रेम-निविड नीड़ जुमल प्राण-विहग भूमि ।।
सुन्दर हे दिव्य देव, मुग्ध प्राण मीत ।
वर्ण वर्ण पुष्पित अछि अहिंक गंध गीत ।।

अहिंक प्रीति विपिन बीच उपजले रसाल ।
चौमुख जे बेढ़ि रहल प्राण आलवाल ।।
पहुँचलि हँसैत उषा सुन्दरी प्रभात ।
स्वर्ण थार दहिन हाथ बिंदी सिर गात ।।

चुपहि आबि दोहिराओल स्वर्ण किरण हार ।
हमर एक मात्र अहीं प्राणक आधार ।।
साँझ सखी नम्रमुखी शून्य धेनुधाम ।
विजन बाट-घाट, सिन्धु पश्चिमी ललाम ।।

आबि शान्ति वारि कलश भरल अर्घ-पाद्य ।
(मंद-मंद सांध्य विहग बजबय मृदु वाद्य ।।)
अहाँ जतय हमर ततय भूमि ओ अकाश ।
मुक्त भ्रमण विचरण हित परिसर अवकाश ।।

दिवस-निशि न,भानु-शशि न,एकहु कहुँ प्रानी ।
रूप गंध परस रस न, शेष न वा वानी ।।

५८

'ए आमार शरीरेर शिराय शिराय'

सीर सीर शरीर मे अछि रक्त स्रोत बहैत ।
प्राण सागर मे तरंगक भंगिमा उमड़ैत ।।
जीवनक आवर्त मे जे घूर्णिमा गतिवंत ।
दिग्-विजय लय रूप स्तूपायित उमड़ले हंत ।।
छंद नव नव ताल लय मे नियत नर्तित प्राण ।
करय चलले भुवन भरि सप्राण जे भ्रियमाण ।।
वसुमती धरतीक जत रोमाणु तृण उत्फुल्ल ।
पुष्प पल्लव तरुलता केर अंग अंग प्रफुल्ल ।।
चेतनाहिक प्रेरणा अछि बुंद बुंद अमंद ।
बरसि रस करइछ तरंगित सिन्धु से निष्पंद ।।
मरण-जीवन ज्वार-भाटा नित्य चलइछ घोर ।
प्राण शक्तिक चेतना थिक जतय जे किछु जोर ।।
अंग अंगक स्फूर्ति पूर्तिक युग युगांतक स्पंद ।
धुनय धमनी कें नचाबय रक्त कें निर्द्वंद ।।

५६

'के गो अन्तरतर से'

अंतर मे के छथि निभृत बसल अनुरागी ?
चेतना वेदना हमर परस रस भागी ।।
दृग मे संकेतित मंत्र हुनक आमन्त्रण,
हृत्तन्त्री झंकृत, गुँजित छन्द नियन्त्रण,
कत सुख-दुख हर्ष-विषादक संगहि भागी,
अंतर मे के जगबथि तृष्णा अनुरागी ?
स्वर्णिम रजताभ नील नीलम मरकत रङ्ग,
गथइछ माया क सूत्र मे माला कत रङ्ग,
पद-पद्म बढ़ाय चढ़ाय लेथि पुनि अपनहि,
कय देथि निमज्जित सरस सुधा सुख सपनहि,
अबइछ - जाइछ युग नाम रूप रस भागी,
अंतर मे के बरिसाबथि रस अनुरागी ?

'मर्तवासीदेर तुमि जा दियेछ प्रभु'

मर्त्यं भुबन वासी के देलहुँ जे किछु अपने
कत विध सुख उपहार भार से देखी सपने
आशा मेटि समेटि कामना रिक्तपानि नित
शेष अहिँक उद्देश भटकि रहलहुँ सव विपिने
सर सरिता नित नियत कर्मरत अन्त अहिँक पद
हुलसि परसि जल विभव समर्पित करइछ अनुपद
कुसुम रूप रस विकसित जग सौरभ भरि कत छन
अंत सफल होइछ पद पूजन पावि समर्पन
जगत प्रीति बिस्तार रीति मन प्रभुक अर्चना
जग वंचित बिनु कयनहुँ संचित साधि साधना
कवि निज गान क स्वर पर जे किछु तनइछ बुनइछ
बरण बरण आवरण लोक श्रवण क रुचि जगइछ
किन्तु शेष निःशेष अहिंक मिलन क हित अर्पित
भेदि शब्द आवरण अर्थ गुण अहिंक चरण चित ॥

६१

'साझे साझे कत बार भावि, कर्महीन....'

माझ - माझ मे कर्मरिक्त सोंची मन मे कत बेर,
सांझ - सांझ मे बुझी व्यर्थ बीतल दिन स्वर्ण अनेर।
किन्तु हमर क्षण अन्तर्यामी यदि अपनाओल एक,
बितल न विफल, सकल सफले पुनि चरण रेणुहिक टेक।
अन्तर प्रान्तर मे गुपचुप उपजाओल अंकुर छीन,
किसलय कलित, ललित कोरक पुनि सुरभित फूल नवीन।
रस रंजित फल अंचित किंचित रूप गंध रस दीन,
बीज कोष मे संचित सहजहिँ कयलहुँ अहाँ प्रवीण।
अलस सेज पर सुतल छलहुँ, बुझलहुँ निशि जीवन रिक्त,
किन्तु प्रभातहिँ उठि देखल, छल जीवन बन रस सिक्त॥

'हे राजेन्द्र, तव हाते काल अन्तहीन'

देव देव ! हे महाकाल ! अछि अहँक हाथ मे काल अनंत ,
छन छन पल पल गनि सकते के सिन्धु बीच बहि बिन्दुक अंत ।
दिवा-निशा कत अबइछ जाइछ बोहिआइत कत युग कल्पांत ,
नहि बिलंब, नहि काल छेप हे कालनियंता देव ! नितान्त ।
केहन प्रतीक्षादक्ष अहाँ, वरु कली सदी बिच विकसित होय ,
अहँक बिलंबी आयोजन, अगुताइ न कखनहु ऋतु कत होय ।
हमर हाथ नहि काल किंचितो, वंचित हम पल-पल अगुताह ,
होय विलम्ब छनेक कतहु यदि त्वरा विकल हम होइ बताह ।
आयोजन करितहि करितहि टरि गेल बेर नहि सजलहु थार ,
किछु सामग्री जोगा न सकलहु, रचलहु नहि किछु नव उपहार ।
बितल मुहुर्त पूर्ति नहि संकलपक हताश दौड़ल हम भेर ,
किन्तु एतय देखल पुष्कल अछि समय, न कखनहु बेर अबेर ॥

६३

'तोमार सोनार थालाय सजाब आज दुखेर अश्रुधारा'

जननि ! सोन क थार मे हम नोर दुख क सजायबे ,
अश्रु मुक्ता बिंदु रवि ग्रिम हार गर पहिरायबे ।
चान-सुरुज क कुमुद-पंकज अहँक चरण बिराजिते ,
वेदना नखत क रुचिर मणिमाल हृदय सजायबे ।
धन धान्य जत जे भव विभव अछि सभ अहिंक, दोहरायबें ,
हमर कोष क राशि अछि दुख - वेदना लय जायबे ।
दानी ! यथारुचि दान दी, लय ली, न हम गोहरायबे ,
हमर उर जत वेदना मणि रतन जतन भजायबे ।
जननि अपन प्रसाद दय अवसाद हमर बेसाहबे ,
हमर युग संचित 'अहम्' गहि 'त्वम्' अपन भरिआयबे ।।

६४

'हिरि ग्रहरह तोमारि विरह भुवने राजे हे'

अहँक विरह विश्व क कण-कण मे अछि निशि-दिवस विकीर्ण,
वन पर्वत सागर नभ सगरो विरह ताप संकीर्ण।
अपलक नयन प्रदीप नखत केर ज्योतिक छाँह तकैत,
श्रावण घन धारा बरिसाबय पल्लव गीत रचैत।
मनुज क उर मे दुख-सुख सुर मे प्रेम बासना रूप,
स्तूपायित युग-युग सँ प्रभुहि क विरह भाव अनुरूप।
जीवन मे करुणा जगाय, अलसाय, उदास बनाय,
गीतक धुनि मे विरहा भरइछ हमरहु हृदय जगाय॥

६५

'प्रभुगृह हते प्रासिले जे दिन वीरेर दल'

वीर क दल प्रभु क भवन सँ चलले जखनहि,
बल-वैभव जत जे छल से छूटल तखनहि।
छल कवच कतहु आयुधहु जते से छूटल,
युग-युग क जोगाओल शक्ति शौर्य रस सूखल।
दिस-दिस सँ कत आघात सहन करबा लय,
छल विवश प्रभु क गृह सँ फराक रहबा लय।
पुनि जखन जीवन क फल सर्वस्व लुटा कय,
फिरि गेल प्रभु क गृह जगत क रंग मेटा कय।
वीर क दल मे पुनि ओज तेज चमकै छल,
शान्ति क सौरभ उर कुञ्ज पुञ्ज गमकै छल।

६६

'पाठाइले आजि मृत्युर दूत आमार घरेर द्वारे'

लय सिनेह प्रियतम ! अहाँ क पहुँचल ई मृत्यु क दूत ,
हमर जीवन क द्वार ठाढ अछि कहइत किछु अजगूत ।
समय सागर क पार कयल, कत वत्सर पाँतर पार ,
देखितहिँ काँपल हृदय आइ रजनी घन-सघन अन्हार ।
तदपि दीप लय हाथ खोलि देलहुँ हम बन्द केबार ,
स्वागत अछि कर्तव्य, पठाओल प्रियतम बिदा हकार ।
कर युग जोड़ि, नयन जल भरि भरि पूजब चरण पखारि ,
प्राण सम्पदा युग सँ संचित अर्पित करब सम्हारि ।
इतिआयल जीवन, प्रभात मे भरि जायत तम पूर ,
जत जे सुमन कामना विकसित झरि जायत पद धूर ।
शून्य सदन मे अहम् शेष अर्पित होयत पद पूत ,
लय सनेस प्रियतम अहाँक पहुँचल ई मृत्युक दूत ।।

६७

'पारवि ना कि योग दिते एइ छन्दे'

दय सकबह कतबा की अपना योगदान एहि छन्द मे ।
अपनहि बहि भसियैबा केर—दहि जैबा केर—आनन्द मे ।।
कान पाथि की नहि सुनइत छह दिस दिस गान क गुञ्ज मे ।
तपन ताप ओ चान नखत केर ध्वनित मृत्यु केर पुञ्ज मे ।।
धह-धह जरइत अनल ज्वाल बिच जरबा केर आनन्द मे ।
दय सकबह कतबा की अपना योगदान एहि छन्द मे ।।
उन्माद क सङ्गीत तान पर धड़फड़ाय दौड़ैछ के ?
नहि पाछाँ तकइत कखनहु मुह कनियहु नहि मोड़ैछ के ?
अति स्वच्छन्द छनहु नहि पड़ले जगत क तृष्णा अन्ध मे ।
लुटितहुँ पथ दिस बढ़िते जाइछ अपन मन क अनुबन्ध मे ।।
चपल चरन आनन्द मगन जनु बहइत मलय समीर हो ।
ग्रीष्म क वन बसात, पावस घन, शरद क सरिता तीर हो ।।
ऋतु-ऋतु नृत्य निरत सौरभ रत बहइत कत मधु नीर हो ।
वरण गीत धुनि तान लगबइत बहइत सुरभि समीर हो ।।
उड़ा-पुड़ा सर्वस्व लुटा मरितहुँ पड़ितहुँ आनन्द मे ।
दय सकबह कतबा की अपना योगदान एहि छन्द मे ।।

६८

'आमि आमाय करब बड़ो, एइ तो आमार माया'

पेघ बनायब अपना केँ अछि बढ़ल हमर मन माया,
अहँक ज्योति निर्मल तकरो हम रङब अपन रङ छाया।
अहाँ दूर राखब अपना केँ सोर करब कत सूरे,
श्यामल बनते हमर तनुक तन अहँक विरस भरि पूरे।
विरह गान धुनि बाजि उठल पुनि धरनि गगन बनि गेल,
आशा खनहि निराशा, हास-रुदन पुनि कत रङ खेल।
खसल उलङ्ग तरङ्ग कते उठि, सपन - उमङ्ग सभङ्ग,
अपन पराजय जाल बुनैत बझाओल हमरहि अङ्ग।
अहँक यवनिका पट बिस्तर दिन - रजनी तूली योग,
शत शत छवि अङ्कित करइन छो अहाँ कहाँ बसि दोग।
आसन सिंहासन जत साजल सब तरि बाङ्कम अङ्क,
रेखा सरल न एकहु देखिअ उक्ति वक्र ध्वनि व्यङ्ग।
गगन सघन अछि अहँक—हमर ई अनुपम मिलन क मेला,
कते दूर छुटि गेल दुहुक बिच जत जे अलबल खेला।
हमर अहँक मधुमय धुनि गुञ्जन कुञ्ज-कुञ्ज मे गुञ्जित,
किन्तु गतागत करइत - धरइत कटइछ बेला पुञ्जित।

६६

'কাশের বনে শূন্য নদীর তীরে, আমি তারে জিজ্ঞাসিলাম ডেকে'

पुनि कास क वन सँ देखल सरिता मे बहइत,
अर्थहीन ई स्नेह ज्योति जल उर मे जरइत।
भरलि साँझ चहु दिस सँ बेढ़ल घेरल तम दल,
हम अकुलाय बजाय कहल, सुनु सुन्दरि! किछु पल।
घर अन्हार ई हमर, अहँक ई सहजहिं जगमग,
दीप बारि सार्थक करबे हरबे दुख अग-जग।
देखि हमर मुह निश्छल दृग निश्चल निष्पन्दे,
कहल, शून्य नभ बारय अयलहुँ दीप अमन्दे।
पुनि नभ दिस ताकल, जगमग कत ज्योति क ज्वाला,
जरइछ बिनु किछु अर्थ अकारण दीपक माला॥

७०

'आर नाह रे बेला, नामल छाया'....

सुकल छाया नगर सगरो अब न बेर अबेर करबै ।
रजनि सँ पहिनहि सजनि ! चलु घाट कलश सबेर भरबै ।।
सरित धारा कल-कल क ध्वनि सान्ध्य गगनक शून्य भरइछ ।
पार पथ मे स्वर क रथ मे बैसि क्यो जनु सोर करइछ ।।
विजन पथ मे नहि गतागत एखन ककरहु देखि पड़इछ ।
प्रेम सरिता मे तरङ्ग जगाय मदिर समीर बहइछ ।।
पता नहि सरिता क तट सँ फिरब वा परिसर बिचरबै ।
चलिअ सजनी ! बीन बजबय रजनि तरनी कलश भरबै ।

७१

'प्रतिदिन आमि हे जीवनस्वामी दाँड़ाब तोमार सम्मुखे'

ओड़ि कर युग चरण-धूलि चढ़ायबे हम माथ ।
रहब नित सम्मुख अहाँकेर जीवनेश्वर नाथ ।।
क्षितिज धरि विस्तृत गगन केर तनल नील वितान ।
नत नयन उर भरित भावेँ धरब पद चित ध्यान ।।
जगत पारावार मे उठइछ अनन्त तरङ्ग ।
अहँक सम्मुख ठाढ़ हम रहबे अनावृत अङ्ग ।।
जखन सेब समेटि सृष्टि क जते कर्मक जाल ।
राजराजेश्वर ! अहँक पद पर झुकायब भाल ।।

७२

'देवता जेने दूरे रइ दाँड़ाये आपन जरे आदर करि मैं'

ने सिनेहेँ लग पहुँचलहुँ, दूर देव पवित्र !
बुझि पिता पुनि प्रणत, परसल पानि नहि गुनि मित्र ! !
यदपि सहज सिनेह वश प्रभु उतरि अवनत भूमि,
नहि अभिन्न सखा बुझल ने उर लगाओल जूमि ।
बन्धु जन मे एक बान्धव अहीँ, चिन्हि नहि लेल,
बाँटि-कुटि नहि कुटी भरलहुँ अहँक एहन अलेल ।
सुख-दुख क नहि बोझ सभ मिलि उठा सकलहुँ हन्त !
आइ सम्मुख कोना जायब संकुचित चित अन्त ।
हम तटहि पर भ्रान्त कान्ति-विहीन रचि किछु खेल,
कूदि सकबे प्राण-सागर मे कोना अनमेल ।।

७३

'वैराग्य साधने मुक्ति से आमार नय'

साधना मुक्तिक हमर नहि अछि विरागेँ,
लक्ष्य जे किछु लभ्य से बन्धन क रागेँ।
कनक भाजन महग मौलिक हस्तगत नहि,
की हमर मृत्पात्र अमृत क रस भरत नहि?
वारि नहि सकबे अखंड अकास दीपे,
यदि च ज्योति अनन्त कत कत द्वीप द्वीपे।
अहिक रूप शिखा शिखर सँ बारि हे हरि!
दीप लघु लेसब न की मन्दिर क देहरि?
दृष्टि नासा अग्र, आसनबद्ध, मानस एकताने,
रोकि सकब न सम्भवो इन्द्रिय विताने।
रूप रस ध्वनि गन्ध परस क रस तरङ्गहि,
तरङ्गित मन अरपबे पद रज प्रसङ्गहि।
नेह-मोह क पथहु चलि हम निकट जायब,
राग बलहि विराग गति बढ़ि भक्ति पायब॥

७४

'सुन्दर वटे तव अङ्गद खानि'....

कनक रतन मनि खचित सुचित हे अलङ्कार सिगार ।
कत कत नखत खचित भुज भूषण अछि सुन्दर शुचि सार ।
किन्तु अहँक कर मे जे रोचित वङ्किम विद्युत् धार ।
पलहु झलकि यदि उठय दृष्टि मे बढ़ि-चढ़ि रुचि सञ्चार ॥
गरुड पाँखि सन जगमग धूमर अस्त भानु सन लाल ।
जीवन दीप शिखा क लपट जनु दीपित अन्तिम काल ॥
आत्मिक ज्योति जेना छन भरि मे भौतिकता कें शेष ।
करइछ तहिना अहँक हाथ मे खड्गधार केर रेख ॥
वज्रपाणि ! तव करगत शोभित खड्ग भुजगमणि सार ।
अनुपम, जकर न तुलना तिल भरि कय सकइछ मणि-भार ॥
कत कत नखत खचित भुज भूषण रहो बनल शुचि सार ।
किन्तु वज्रधर ! अतुलित रोचित बंकिम विद्युत धार ॥

७५

'विधि जे दिन क्षान्त दिलेन सृष्टि करार काजे'

जे दिन कयल सृष्टि पूर्ण विधि विधानशाली ,
से दिन फुटल नखत कुसुम नील गगन डाली ।
आगु राखि सृष्टि चित्र मुदित हँसय भभा',
छाया पथे बेढ़ि जुटल सकल देव - सभा ।
भरल मोद, मन विनोद, केहन दिव्य विभा !
सृष्टि - फलक कते सफल, कते रंग प्रभा !
छन्द जेना, मन्त्र जेना, भानु - चान जोति ,
ग्रह विग्रह नखत कते अगनित मनि मोति ।
एही समय सभा बीच कयलक क्यौ घोल ,
अरे ! टूटि खसल मोति एक ज्योति गोल ।
कतय टूटल ? कतय खसल ? कतय गुड़ि कि गेल ?
बेनु - बीन गान - छन्द बन्द खोज लेल ।

सकल देव ताकि रहल केहन दिव्य रत्न !
आन नहि समान ओकर खोजिअ कय यत्न।
तखनहि सँ ताकि रहल बाट कतय पा'व,
दिन न चैन, निन न रैन, केहन ओ अभाव।
कहथि सबहि सब सँऽ बढ़ि-चढ़ि ओ अमोल,
तनि बिनु भव-विभव अन्ध, ककरहु छल बोल।
घन निशीथ, स्तब्ध पवन, तारक मुसुकाय,
कहल चुपहि, अछत नखत ताकब की जाय।।

७६

'यदि तोमार देखा ना पाइ प्रभु, ऐ वार ए जीवने'

यदि नहि दर्शन पाबि सकी प्रभु ! एहि जीबन मे ,
तदपि रहय खलइत अभाव ई अनुखन मन मे ।
जनम अवधि पथ हेरितहुँ हरि नहि देखल नयाने ,
असह विरह दुख - सुखहु छुटय नहि छनहु धेयाने ।
सदिखन मन मे रहय, किऐ पहु मुह छथि झपने ?
सुधि क वेदने विकल रही हम शयने सपने ।।
जगत हाट मे कटइत चानी दिन भरि मन भरि ,
कन-कन धन संचित करितहुँ बंचित बुझि बिनु हरि ।
कहुखन छनहु न खइतहुँ - पिबितहुँ बनय बिसरने ,
सुधि क वेदनें बिकल रही हम शयने सपने ।।

आलस बश यदि बाट छोड़ि हम बैसि कात मे,
धड़ खसाय रज सेज सजाबी मोह घात मे।
तहुखन मन मे रहय बाट अछि काट'क अपने,
सुधि क वेदने विकल रही हम शयने सपने॥
उल्लासें हँसि उठी, मगन मन बेनु बजाबी,
रचि राजस रुचि रुचिर शुचिर हम सहज सजाबी।
तहुखन मन मे रहय, न प्रभु कें अनलहुं अपने,
सुधि क वेदने विकल रही हम शयने सपने॥

७७

'आमि शरत शेषेर मेघेर मतो तोमार गगन कोणे'

शरद समय क मेघ खण्ड जकाँ कतहु बिलमैत,
अहँक गगन क कोनहु कोऽनहु मे सदैव घुमैत ;
हम रही ओहिना अकारण व्यर्थ जीवन जाय,
हे चिरन्तन सूर्य ! दिनमणि ! हमर अमर निकाय।
आइ कर-सम्पात नहि आलोक मिश्रित हाय !
बाष्प मे परिणत करय नहि, तकर फलहि बुझाय।
गनि रहल छी मास दिन पल, भेल दूर फराक,
निक अहिँक सभ खेल, हम तँ खेलौने चढ़ि चाक।
खेलयबे यदि अछि खेलाड़ी ! खेलु नव नव खेल,
क्षणिकता कण लय हमर अहँ रंग रचु कत मेल।
वर्ण-वर्ण सजाउ स्वर्णिम किरण रस मे बोरि,
वायु स्रोत बहाउ रस-रस युक्त अभिमत डोरि।

शून्यता जत रिक्तता अछि हमर, सभ केँ गोरि,
चित्रता निज नित्य नवल विचित्रता रस बोरि।
तखन जखनहि हो अहँक इच्छा रचिअ अब खेड़ि,
पुनि समापिअ घन निशीथहि मे न बेरि अबेरि।
सघन तिमिरहि मे मिलब हम नोर धार नहाय,
रहब निर्मल शुभ्र शीतल नव प्रभात नहाय।
तिमिर रेखा रहित विशद अकाश मे अवकाश,
ज्योति सागर पार जायत मिलय मेघ बसात।।

७८

'आमार घरे ते आर नाइ से जे नाइ'

जे घर मे नहि हमरा, ओकरा पाबि न सकबे,
जे स्वर कण्ठ न हमरा, तकरा गाबि न सकबे।
निकसि पड़य जे ओकरा, कहियो जाबि न सकबे,
उर प्रदेश संकीर्ण कतहु किछु राखि न सकबे।
किन्तु अहँक संसार उदार समायल सब टा,
तकइत गेलहुँ पहुँचि निहुछि जत थापल, तत टा।
सान्ध्य गगन तल आयल छी, हम ठाढ़ गाढ़ मन,
ताकि रहल छी सजल नयन छवि अहँक श्याम घन।
दुख-ओज न, सुख खोज न, आशा तृषा न कोनहु,
देल स्वयं पहुँचाय विधुर उर अन्तर कोनहु।
देव! देब तकरा डुबाय कय शेष निमज्जित,
जे न अमिय रस घरहि परस से विश्व सुसज्जित॥

७९

'भाङा देउलेर देवता,'

हे भग्न मन्दिर देवता !
स्तुति क नहि झंकार वीणा तार मे,
आरती घंटा न बाती थार मे,
शंख ध्वनि नहि सङ्गता ! हे० ॥
नव वसन्त समीर धीर बहैत अछि,
चरण पूजन मे न फूल चढ़ैत अछि,
सुनी सुरभि क बारता ! हे० ॥
पुजारी नित पूजन क लय कामना,
विवश फिरइछ उपोषित बिनु पारना,
साँझ धरि नहि दीपिता ! हे० ॥
कटल उत्सव कत, निशा पूजा बितल,
मृण्मयी विजया क कत प्रतिमा भसल,
अहँ सुचिर अन - पूजिता !
हे भग्न मन्दिर देवता !!

८०

'जगत् पारावारेर तीरे छेलेरा करे मेला'

विश्व पारावार तीरे शिशुक लागल मेला।
उछलि - उछलि लहरि नीरे,
माथ उपर गगन नीले,
श्याम-धवल फेनिल जले, नाचय सकल वेला ॥
उठइछ कत कल-कल धुनि,
नचइछ कत बुद्बुद पुनि,
बिन्दु - बिन्दु लोल लहरि गबइछ अलबेला ॥
बालुक नव रचित महल,
उठय खसय - पड़य चपल,
अपन हाथ, सपन साथ, रचय कते बेला ॥
विपुल नील जलक उपर,
कागज केर नाब सुघर,
शत - शत सब हाथ साथ बहबय अवहेला ॥
हेलि जे न सकय पानि,
फेंकि सक' न जाल फानि,
खेलि रहल सहजहि ओ कौड़ि बिनु झमेला ॥

ओम्हर बणिक देखु 'डेरि,
छनइछ मोती क ढेरि,
जुटबय मणि अगणित, पुनि ओम्हर माटि ढेला ।।

जलधि फेन व्याज हँसय,
लहरि लोल व्यंग्य कसय,
रतन सोध कतहु यतन, कतहु व्यर्थ खेला ।।

कखनहु तँ ढेहु उठय,
अन्ध वारि-वायु बहय,
आस दय बसात माय झुलबय जनि छेला ।।

वृद्ध एक दिस समुद्र,
दोसर दिस बाल क्षुद्र,
मिलल मने निरातङ्क खेलइछ जल-बेला ।।

देखू, झंझाक झोंक,
घेरि रहल गगन ओक,
नाव डुबल, सभय लोक ! उठल कत झमेला ।।

मरण-दूत एक जुट्ट,
कैलक झट लोक ठुट्ठ,
छिट-फुट पुनि शिशुक गुट्ट जुटल मगन खेला ।
विश्व-पारावार तीरे शिशु क लागल मेला ।।

८१

'आमार एइ पथ चाया तेइ आनन्द'

हुनि पथ हेरइत दृग - रथ कतहु न रुकइछ, प्रगति अमन्द ,
पल - पल सुचिर प्रतीक्षा मे भेटइछ कत जे आनन्द ।
रौद तप्त, छाया शीतल, हीतल रीतल चिर द्वन्द ,
वर्षा जल भीजल, वसन्त सुरभित किसलय निस्पन्द ।
नित प्रति प्रेम प्रतीक प्रतीक्षा मिलन परीक्षा अन्त ,
विरह - बन्धन क कारा बिच स्वच्छन्द प्रतीक्षा हन्त !
लय संवाद पवन वन-वन मे घुमओ-घमओ उर मोद ,
हम बैसल दिन - राति द्वारि पर एकसरि करब, विनोद ।
जखन सुमङ्गल वेला मिलन क आबि तुलायत भोर ,
तखन निहारब उत्सुक - आकुल पहु मुह मुदित बिभोर ।
नित तें छन - छन हास-गान मन-मन गुँजित कत जोर ,
दिस - दिस बहय सुगन्ध गन्धवह अमर प्रतीक्षा तोर ।।

८२

'से जे पासे एसे....'

लगहि आबि बैसल छल प्रिय हम जानि न सकलहुँ,
आबि अभागल नीन दाबि गेल जागि न सकलहुँ।
नीरव रजनी मध्य बीन लय हाथ सुसज्जित,
स्वप्नहि गेल सुनाय राग गम्भीर निमज्जित।
राति कपूरी उड़ल, पकड़ि सकलहुँ नहि बीतल,
हारहु धरि नहि परसि कयल हीतल कें शीतल।
अकचकाय उठलहुँ, बाँचल स्वर सौरभ केवल,
दछिन पबन तिमिरहु कें करइत सुरभित अनुपल।

....

[रजनी हमर बिफल भेल सजनी !
आबि लगहु चल गेल दूरतम।
सुमन हार रस परस न उर--
परिसर कें सुरभित कयलनि प्रियतम ।।]

८३

'जीवने जा चिर दिन रमे गेछे अभासें'

जीवन क चिर काल सँ केवल जकर आभास,
कय सकल पुनि नहि प्रभात प्रकाश जकर विकास।
जीवन क अन्तिम चरण मे शेष दान प्रसङ्ग,
जीवन क गीतक वरण मे शेष गानक सङ्ग।
देवता! हम देब से सब आइ अहँक सकास,
कय सकल पुनि नहि प्रभात प्रकाश जकर विकास।
कथा जे न समापि सकलहुँ तानि विपुल वितान,
तथा गान न साधि सकलहुँ लगा शत-शत बान।
छपित जे छथि मोहिनी छबि करब छनहि प्रकाश,
कय सकल पुनि नहि प्रभात प्रकाश जकर विकास।
छलहुँ घुमइत देश-देश, समस्त वस्तुक संग,
भाव कत, जत काज सब छल ओकर हित अनुषंग।

शयन - सपने सतत अपने एकमेव निकास ,
कय न सकले पुनि प्रभात प्रकाश जकर बिकास ।
छल अबैत कतेक जन कत बेर जकरा लेल ,
भय हताश-निराश द्वारहि सँ सबहि फिरि गेल ।
सभ अपरिचित अहिंक परिचित, बसल कतहु अकास ,
बैसि तकइत बाट अपलक अहिंक केबल आश ।
साँझ माझहु झलफलहु दृग-अदृश दर्शन आश ।
कय न सकले पुनि प्रभात प्रकाश जकर विकास ।।

८४

'खोकार चोखे ... घुम आसे सकल ताप नाशा'

अलस - मधुर नेनाक पलक पर जे ई मधुमय नीन ।
के थिक ? कथिक खोज मे बजवय मधुर-मधुर सुर बीन ?

सकल ताप-संताप विनाशा, चिर विश्रामक बासा ।
के जनैछ जे कहाँ कतय सँ उतरि ऐल मृदुहासा !!
छी सुनने, कहुँ दूर देश सँ—परी देश सँ—उड़ि-उड़ि ।
नन्दन वन सँ उतरि देवता आयलि छथि नवबासा ।।
से सिनेह रस रितल गीत - धुनि बजबथि प्रेमक बीन ।
अलस - मधुर नेनाक पलक पर से धुनि मधुमय नीन ।।

की पुनि शिशुक निन्द-निष्पन्द अधर मृदु मन्द सुहास ?
के कहते से कोन देश मे जनमि करैछ निवास ?
अछि कहैत क्यौ, शरद शुभ्र शशि किरण कोनहु शिशुगात--
परसि, जनम लेलक पुनि दोसर अमृत कुलहि अवदात ।।
शीत प्रभातक शुभ्र समय, क्षीरोदधि सद्यः स्नात ।
से थिक शिशुक निन्द - निष्पन्द अधर मृदु-मन्द सुहास ।।

शिशुक अङ्ग मे जे कोमलता से छल कतय नुकैल ?
रतन अमोल यतन सँ राखल, कत दिन कहाँ झँपैल ?
छी बुझैत, नेनाक माय छलि जखन किशोरी रूप ।
करुण प्राण बिच वयस माधुरी बनल रहस्य अनूप ।।
आइ काल - अन्तर सँ नेहें सिंचित पुनि अँकुरैल ।
शिशुक अङ्ग मे से कोमलता जे छल एतय नुकैल ।।

आशिष आ-नखशिख शिशु पर जे बुझि पड़इछ बरिसैत ।
के जनइछ ई कोन मङ्गलक मण्डल सँ उमड़ैत ।।
धीर समीर वसन्त-मलय केर, प्रथम बिन्दु आषाढ़ ।
असिनी धानक सिहरनि, अगहन खरिहानक भण्डार ।।
रहि-रहि परखि बरसि रहले शिशु शीश सजल उमड़ैत ।
आशिष आ-नखशिख शिशु पर जे बुझि पड़इछ बरिसैत ।।

ई नेना जे निन मे मातल नयन मूनि निश्चिन्त ।
तकर भार छै ककरा पर, के एकरा लेल सचिन्त ।।
रजत रश्मि ओ कनक किरण जे निशि दिन पहरा दैछ ।
जे भरि भुवन अपन करुणाक किरण कण झहरा दैछ ।।
तकरहि पर छै भार एकर, अभिभावक भवक अनन्त ।
ई नेना तें निन मे मातल नयन मूनि निश्चिन्त ।।

८५

'गान दिये जे तोमाय खुंजि बाहर मने'

गान क स्वर लय जीवन भरि अन्तर बाहर हम सब तरि ।
ताकि रहल छी चिर-उत्सुक चित जीवनधन कें उपकरि ॥
गीत क धुनि हमरा बौआबय घर - घर द्वारे - द्वारे ।
जे किछु बूझल लोक-संग्रह कर परसि रसक लय तारे ॥
से सभ गीते सिखा गेल पुनि देखा गेल पथ गुप्तो ।
हृदय गगन मे झलमल झलफल चिन्हा गेल जत लुप्तो ॥
कत रहस्यमय, सुख-दुखमय, अज्ञात लोक मे घुरि फिरि ।
साँझ क लुकझुक मे पहुँचौलाक कोन भवन मे अगुसरि ॥

८६

'बेला काटास ना गो'....

बेर ने बिताउ, बाउ ! बेर ने बिताउ ।
समय रतन यतन सँ जोगाउ, ने गमाउ ।।

भेल भोर, सोर सगर अरुणिमा करैछ,
पूब दिशा ज्योति निशा नीलिमा हरैछ,
शीत मन्द गन्धवहो वन-वन सजबैछ,
विहग-पुञ्ज कुञ्ज-कुञ्ज मधुरिमा गबैछ,
काँट गली कुशक थली कुसुम दल हँसैछ,

अलस - जडित ! तुरित दृगक गाँठ हठि हटाउ ।।

उठल बेर, कत अबेर, पथिक रथिक गेल,
कहल--चलू, हमहि मिलू, बिचहि कतहु मेल,
सेहो कते सोचि लेब, बन्धु कतहु दूर,
विषम पथक छोर श्रमें एकसर छथि चूर,
जागु, लागि पाछु, आगु चूक पूरि आउ ।।

प्रखर रवि क चण्ड किरण गगन पत्र टाँट ,
लूह - लपट ज्वाल - जाल दिशा-देश आँट ,
तृषा - प्यास सँ हताश वन - बतास भेल ,
रुद्र दिवा रौद्र किरण तपितहिँ बढ़ि गेल ,
स्वर्ण पुरुष ! कष्ट निकष स्वयं केँ कसाउ ,
मोल केँ बढ़ाउ, अपन सपन केँ सजाउ !

दृगेँ देखु, मनें सोचु समय भीम-रम्य,
पथे - पथे पदे - पदे वेदना अदम्य ,
किन्तु दुख क बेनु - बीन झंकृत स्वर तार ,
अन्त विजय राग रम्य सुर धुनि सञ्चार ,
बजा रहल, सजा रहल, पथ - रथ चढ़ि आउ !
समय ने लगाउ, वीर ! विजय केँ बजाउ ॥

'कोलाहल तो बारन हल, एबार कथा काने काने'

कोलाहल अछि मना, आब किछु कानहि कहबें।
प्राण क जे संवाद भाव हम गानहि भरबे ।।
राज - मार्ग पर जन - गण सञ्चर,
किनब - बेसाहब हित कत - कत स्वर,
हम अबेर घुरिआइ आइ दिन दुपहर वेला ।
के अकाल मे बजा रहल गृह काज - झमेला ।।
बिनु ऋतु हमर वाटिका विकसित,
मञ्जरि पुञ्जित, मधुकर गुञ्जित,
मन्द - अमन्द बेजाय - नीक बुझइत वय गेला ।
सङ्ग खेलाड़ी देखि रमल मन बरबस खेला ।।
बिनु काजहुँ की बजा रहल अछि,
कत विध वन - पथ सजा रहल अछि,
जानि सकै अछि ब्रेह, अबुझ पुनि की हम बुझबे ।
प्राण क जे संवाद भाव हम गानहि भरबे ।।

८८

'मरण जे दिन दिनेर शेषेर'

दिन छपित किरन क कनक सङ लय जखन ।
मरन पहुँचत द्वारि अरपब कोन धन ?
प्रान खानि क बीच जत जे मनि - रतन ।
देब आगाँ उझिलि हम अतिथि क चरन ।।
हाथ खाली नहि बिदा करबे यतन ।
यथाबिधि अतिथि क करब सत्कार घन ।।
कते शरत प्रभात, मधु रजनी रुचिर ।
पावसी झपसौ, उषम सन्ध्या मधुर ।।
फल क रस, फूल क सुरभि, दल हरितिमा ।
हम जोगाओल हृदय मे जत मधुरिमा ।।
दुख - सुख क धुपछाँह, कटु मधु अनुभबो ।
अन्तर क अनुभूति स्मृति रस सम्भवो ।।
देब सकल सजाय अन्तिम बिदा छन ।
मरन पाहुन चरन अरपब प्रान धन ।।

८९

'पेये छो छुट्टी बिदाय देरो, भाइ'....

चललहुँ घर घूरि पूरि पलपल अवकाश ।
नमस्कार प्रवासी क पड़ोसी जे आसपास ।।
कुंजी घर-द्वार केर दैछी सुन्झाय ।
खाली घर कयल, कोनहु दाबी न दाय ।।
कते दिन पड़ोसिया क रूपमे बसैत ।
जतबा जे देल अधिक ताहूसँ पबैत ।।
गुरु लघु जत जे समाज सभ केँ परनाम ।
आशिष बानी क प्यास पूरिअ मन काम ।।
राति बितल दीप शिखा कोनहि मोहिऐल ।
पूब क्षितिज जोति सहज भावहिँ उगिऐल ।।
सुर मे पराती केओ गाबि उठल टेरि ।
यात्रा क वेर चलब करबे न देरि ।।

६०

'एक दिन देखा हबे जाबे शेष'

एक दिन आलोक नयनक अस्त भावी ।
पलक पट आक्षेप अंतिम दृश्य व्यापी ।।
महानिद्रा समुद्रक बिच दृग निमज्जित ।
(देखि नहि पाओत यदपि) जलथल सुसज्जित ।।
कूल कलरव जगत सिंधुक मुखर खेला ।
सुख-दुखहिँ घरघर बहत नित नियत वेला ।।
सुमिरि से विश्वक निखिल संगीत मधुमय ।
आइ उत्सुक नयन देखी अलघु चिन्मय ।।
जे जते देखल बुझल सब अतुल दुर्लभ ।
धरणि तलमे थल कनहु नहि व्यर्थं अविभव ।।
प्राप्त जे अप्राप्त जे सभ रहओ जतवा ।
तुच्छ बुझि जे नहि, बटोरल देब ततवा ।।

६१

'ओ गो आमार एइ जीवनेर शेष परिपूर्णता'

हे ! हमर जीवनक छन्दक चरम चरण हे !
हे ! अन्तिम सङ्केतित पद अमर मरण हे !!
पल भरि पलकक छाया मे लेब शरण हे !
किछु करब सङ्ग आलाप कथावतरण हे !!

जीवन भरि अहिँक हेतु कयलहु जागरना ।
दुख-सुखक बोझ लदितहुँ कत देखल सपना ।।

जत आस-प्यास, जत प्रेम-सिनेहक बन्धन ।
देलहुँ चढ़ाय चित सँ सब किसकाल चन्दन ।।

दृग-इङ्गित अङ्ग बनाउ, अनङ्ग अगुन हे !
हे मरण ! कहू किछु गुन-गुन कथा करुण हे !

भय गेल सुमन सञ्चयक कृत्य परिपूरित ।
गाँथल मङ्गल माला जेहि सँ वर पूजित ।।

आयब जखनहि वर वेश प्रणय मुद्रा मे ।
वनि बधू, वरक सङ रहब मिलन-निद्रा मे ।।

छूटत नैहर सहवास सखी सजनी जत ।
पति रतिवश रजनी मिलब विजन गृह अभिमत ।।

अन्तिम वरणक हित पहुँचब चरण शरण हे !
बरणीय स्वयं वृत प्रियतम अमर मरण हे !!

६२

'एबार तोरा आर जाबार बेलाते सबाइ बयध्वनि कर'

करु ठाट-बाट सँ बिदा सबहु कहि जय जय ।
एहि बेर हमर यात्राक माङ्गलिक अक्षय ।।
रङि गेल प्रभाती रङ्ग नील नभ मण्डल ।
निर्मल नीरज निष्पंक पंथ मृदु - मङ्गल ।।
चलबे की लय संवल से नहि किछु सोचल ।
बरु रिक्तहस्त चलि दी सोझे मुह, रोचल ।।
ने बटोहीक वेशेँ पाथे सङ सजि - धजि ।
हम चलब मिलन-मन्दिर प्रणयक मधुरुचि रचि ।।
सङ्कोच - रोच बाधा - विपदा परवाहि न ।
पन्थक कण्टक कष्टेँ मुह आबय आहि न ।।
मिलनक यात्रा सुर बाजि उठल उर वीणा ।
झकझका उठल सन्ध्या तारा पुनि क्षीणा ।।
पुरबीक तान के बाँसुरीक सुर टेरय ।
करु ठाट-बाट सँ बिदा सबहु कहि जय जय ।।

९३

'जीवनेर सिंह द्वारे पशिनु जे क्षणे'—

कखन कोन छन भुवन भवन मे कथलहुँ एतय निवेश ।
सिंह-द्वार जीवनक खुजल अज्ञातहि कयल प्रवेश ।।
शक्ति कोन चढ़ि कोड़ रहस्य भरल छल जनिक अनन्त ।
निविड निशीथ सघन वन विच विकसित जनु कुसुमक वृन्त ।।
किन्तु प्रभातक प्रभा उदित होइतहिँ जगमग संसार ।
नयन निहारल धरा कोर नभ स्वर्ण किरण उपहार ।।
जनु जननिक हो अङ्कपालि चिर परिचित नेहक धाम ।
स्वयं अरूपा रूप धयलि जननिक गुन अगुन अनाम ।।

९४

'আবার দিনে এই কথাটি বলে যেন যাই'

बिदा काल बोल हमर एतबे हो घोल ।
देखल सुनल जते तते सभ किछु अनमोल ।
ज्योति क समुद्र बीच उच्छल जल लोल ।
विकसित शत शतदल मधु माधुरी हिलोल ।।
पिबइत मकरन्द बिन्दु कण्ठ मृदुल रोल ।
बिदा काल बोल हमर एतबे हो घोल ।।
खेल-महल पहुँचि विश्व कौतुकी क द्वार ।
खेलइत कत देखइत कत रूप निराकार ।।
परस हीन सरस अङ्ग छुबि न सकी लेश ।
एतहि शेष कर'क होय करु अशेष शेष ।।
मना लेब, जना देब, कथा व्यथा-मोल ।
बिदा काल बोल हमर एतबे हो घोल ।।

९५

'आमार खोवा जखन छिल तोमार सङे'

छलहुँ खेलाइत अहाँ संग वन-वन बहु-रङ्गी ।
तखन न चिन्हि सकलहुँ, अहँ के छी जीवन-सङ्गी ।।
भय-सङ्कोच न रञ्च जीवनक धारा चञ्चल ।
भोरे सोर मचाय सङ्गली लगा अपन दल ।।
सखा समान घुमाय वनेवन बेर अबेरो ।
हँसी खुशी हम छुटि खेलाइ कत खेल अनेरो ।।
गाओल जे अहँ गान सङ्ग पुरलहुँ कत भङ्गी ।
तखन न बुझि सकलहुँ की गबइत जीवन-सङ्गी ।।
आइ अचानक शेष खेल सहसा रुकि गेले ।
स्तब्ध शून्य आकाश चान-सुरुजक रुचि गेले ।।
अहँक चरण दिस प्रणत नत कय दृग-भङ्गी ।
भुवन निहारय ठाढ़ बिजन मे जीवन-सङ्गी ।।

९६

'तोमारे चिनि' बले : आमि करेछि गरब लोकेर माझे'

छथि चिन्हार ई कहि कहि लोकक बीच ।
परिचय गौरव सँ हम अपनहि हीच ॥

हमर तूलिका रेखा मे कत रूप ।
छथि निहारि रहला कत तत्त्व अनूप ॥

पूछथि आबि कते हमरा गोहराय ।
के परिचित, को परिचय ? दिअ जनाय ॥

कहि न सकी किछु, वाणी होइछ रुद्ध ।
एतबे टा कहि दी हम स्वयं अबुद्ध ॥

सुनि से अहाँ उठी सहजहिँ मुसुकाय ।
ओ सभ घूमथि हमरा दोष लगाय ॥

अहँक रूप लीला कें गीत बनाय ।
सकलहुँ नहि रहस्य कें हृदय नुकाय ॥

पूछथि कत जन आबि कते खोधिआय ।
गीतक किछु अर्थो छह, कहह बुझाय ॥

तखन कहब की ? नहि बहराइछ बोल ।
अर्थ भाव की, केवल कण्ठक घोल ॥

करइत कत उपहास फिरथि सब लोक ।
अहँक अधर पर हासक अछि आलोक ॥

६७

'आमि हाल छाड़ले परे तुमि हाल धरबे जानि'

हमर हाथें छुटल जे पतबार ।
पकड़ि तकरा करब निर्भय पार ।।
लोल लहरी उठय पारावार ।
नहि तकर परवाहि, तरणी धार ।।
छोड़ि दी, अहँ छोड़ि दी, सञ्चार ।
नियत करते स्वयं जे निर्वार ।।
मिझा जाइछ स्वयं रहि रहि दीप ।
जरयबे पुनि जरल प्राण प्रदीप ।।
किन्तु आलोक क अराल तकैत ।
बिसरि गेलहुँ रतन यतन करैत ।।
हम पड़ल पुनि तिमिर अञ्चल ओरि ।
जतय मन आसन लगाउ सङोरि ।।

९८

'हार-माना हार पराब तोमार गले'—

हारि मानल, हार पहिरयबे अहिँक गर देबि !
छल अपन बल दूर बसबे हमहि कत की डेबि ।
जनैछी हम जनैछी, अभिमान भासल जाय ।
वेदना करुनाक बेधल प्रान निकसल जाय ।।
किन्तु आकुल गान कण्ठक, शून्य मस्तक-भिड ।
हमर दृग-जल गला सकते कठिन पाथर पिंड ।।
तखन शतदल खोलि चटचट स्वयं रस झकझोरि ।
नुका सकते नहि मधुर मकरन्द उर मे बोरि ।।
निभृत गगन क कोन स ककरहु नयन विस्तार ।
घर क बाहर बिजन मे बजबा' करत निस्तार ।।
तखन किछु नहि शेष रहते भाव भूषा भेष ।
चरण तल मे बरण करबे मरण चिर निःशेष ।।

९९

'रूपसागरे डूब दियेछि अरूप रतन आशा करि'

रूपक रत्नाकर मे डुबकी लगा रहल छी नाथ !
भेटत रत्न अनूप अरुपक चढ़ा लेब निज माथ ॥
किन्तु आब नहि डुबब घाट-घाटक न पीबि पुनि पानि ।
जीर्ण तरी भसिआय रहल अछि लेल आइ हम जानि ॥
बुझि पड़इछ एहि वेर ढेहुमे पड़ि सभ किछु बोहिआय ।
सिन्धुक तल धरि पहुँचि अमृत पिबि मरितहुँ अमर कहाय ॥
श्रवण विषय जे नहि, सुनबे से धुनि तत नित्य बजैछ ।
प्राण बीण लय पहुँचब, महफिल अनलक जतय लगैछ ॥
हमर वेदना गानक अन्तिम चरण जखन अवसान ।
नीरव जीवन-वीणा सौंपब हुनकहि शरण निदान ॥

Scanned by CamScanner

१००

'भेबे छिनु मने जा? हबार ताकि शेषे'

बुझल मनेमन जे छल भावी भेल, न पुरल उदेस ।
चान-सुरुज मे गहन लागि गेल, यात्रा बनल न लेस ।।
पथक कथा अछि शेष, रुकल गति अन्त अनत गन्तव्य ।
बुझल न छल जयबे कत ? करतब की ? की मन मन्तव्य ?
सठल सङ्ग पाथे साथे सङ्गी - साथी नहि शेष ।
जर्जर जीवन, छिन्न-मलिन ई वसन न तनहु बिशेष ।।
जीवन - पतरा मे जतरा दिन साधित, बाधित भेल ।
जनु सदैव भदवा पड़ले, अध-पहरा लाधल गेल ।।
उचित बुझल तेँ कहुँ एकात, चुप साधि सब छोड़ि ।
निभृत कुञ्ज एकान्त अन्त धरि बास करी मुह गोड़ि ।।
किन्तु आइ देखइत छी अभिनव लीला मुखर विलास ।
समुख अनन्त पथक मंजिल मंजुल करतब कत रास ।।
मौन जखन भेल पुरना भाषा, तखन मुखर नव गीत ।
पथ - पाथे सहजहिं कत साथे, जुटल छुटल जे प्रीत ।।
धय पहुँचा, पहुँचाबय दूरे देश - विदेश अशेष ।
बुझि सकलहुँ नहि मनहु कनहु, जीवन एखनो सोद्देश ।।

'एक टि नमस्कारे प्रभु, एक टि नमस्कारे'

एके नमस्कारे प्रभु ! एके नमस्कारे ।
सकल देह-धर्म बहओ पहुँचि चरण धारे ।।
साओन घन वन वितान,
झुमल - झुकल सजल प्रान,
मनक सकल मर्म झरओ प्रभुक भवन द्वारे ।
एके नमस्कारे ।।
विकल भाव भार धार,
छन्द - बन्ध एकाकार,
मिलओ अभय लयक निलय जलधि सलिल खारे ।
एके नमस्कारे ।।
मानस - यात्री मराल,
जेना दिवा - रात्रि काल,
हृदय प्राण उड़ओ सजग मरण दिशा पारे ।
एके नमस्कारे ।।

अनुक्रमणी

—❀::❀—



श्री सुरेन्द्र झा 'सुमन'

क

काव्य-प्रकाशन

१।	अर्चना	१.२५
२।	साओन-भादव	१.२५
३।	प्रतिपदा	२.००
४।	सनेस	०.४०
५।	शृङ्गार तिलक	०.२५
६।	ऋतु-शृङ्गार	१.२५
७।	चण्डी-चर्या	०.५०
८।	कवि-नवतिका	१.००
९।	'पुत्रोऽहं पृथिव्याः'	०.७५
१०।	कथायूथिका	१.००
११।	मुक्तावली	०.५०
१२।	शृङ्गारहार	१.००
१३।	प्रकृति-शतक	१.००
१४।	प्रकीर्ण-शतक	१.००

(मैथिली-मन्दिर, मिथिला प्रेस, दरभंगा द्वारा प्रकाशित)



स्वनामधन्य महामहोपाध्याय

स्व० डा० उमेशमिश्र

जन्म—१८९२ ई०

निधन—१९६८ ई०

●

श्रद्धा-स्मृति मे

'अनुगीताञ्जलि'

मनसा वचसा समर्पित

'सुमन'

जय–विजय छथि निकट किन्तु न से रमेश थिकाह,
सुधा जनिकर अंगजे पुनि ने सुरेश थिकाह।
सैपस्तरु - फल पूज्य जयदेवक अशेष थिकाह,
दर्शनीय महान विद्वन्मणि 'उमेश' थिकाह॥
कृष्ण कान्ति परन्तु उद्योतित प्रभा द्युति - भार,
गजहड़ा ग्रिम-हार, संस्कृत-मैथिली क सिङार।
कर्म कालिन्दी तथा शुचि धर्म गंगा धार,
छथि प्रयाग, सरस्वती मिलि, तीर्थराज उदार॥
प्राच्य पाश्चात्यहु महाविद्वान् मैथिल – मान,
शिष्य - उपशिष्य क बिशाल परम्परा क निधान।
उपाध्याय महा - महान् दिगन्त कीर्तिबितान,
दिवंगत! तनि पद 'सुमन' सम्मान अञ्जलि दान॥